अध्याय 2

संघर्षकालीन भारत – 1206 ई. से 1757 ई. तक

M4BPQC

भारत पर लगातार विदेशी आक्रान्ताओं ने आक्रमण किए। भारतीयों ने इन आक्रमणों का वीरतापूर्वक प्रतिरोध किया, संघर्ष किया। भारतीयों ने प्रारम्भिक अरबी एवं मुस्लिम आक्रान्ताओं को पराजित कर खदेड़ दिया। उमर खलीफा के समय 636 ई. में अरबों द्वारा पहला समुद्री आक्रमण ठाणे पर हुआ। किताब फुतुह–अल–बुल्दान में उल्लेख है कि अरबों का यह अभियान विफल रहा। इसके बाद बड़वास (भड़ौच) और सिन्ध के डेबाल बन्दरगाह पर अरबों का आक्रमण हुआ। ये आक्रमण भी असफल रहे। चचनामा में उल्लेख मिलता है कि डेबाल के संघर्ष में अरब सेना नायक मुधाइरा पराजित हुआ और मारा गया।

712 ई. में मुहम्मद बिन कासिम व सिन्ध के राजा दाहिर के मध्य भयानक संघर्ष हुआ। इसी बीच संयोगवश एक तीर हाथी पर सवार राजा दाहिर के सीने पर लगा इस कारण राजा मृत्यु को प्राप्त हो गया। इसके बाद भी राजकुमार जैसिया व साम्राज्ञी रानी बाई किले की रक्षा के लिए डटे रहे।

महमूद गजनवी को कश्मीर के शाही शासक जयपाल और आनन्दपाल से कड़ा संघर्ष करना पड़ा। मोहम्मद गौरी को पृथ्वी राज चौहान के हाथों ही कई बार पराजित होना पड़ा।

(i) दिल्ली सल्तनत (1206 से 1526 ई.) :

यामिनी, इल्बरी या गुलाम वंश : कुतुबुद्दीन ऐबक (1206 –1210 ई.) का राज्यारोहण 1206 ई. में हुआ। इसे 'लाखबख्श' भी कहा जाता है। इसकी राजधानी लाहौर थी। इसके दरबार में हसन निजामी को संरक्षण मिला था। कुतुबमीनार की पहली मंजिल ऐबक द्वारा बनवायी गई। कुतुबमीनार का शेष भाग इल्तुतमिश ने पूरा कराया। प्रसिद्ध सूफी संत ख्वाजा कुतुबुद्दीन बख्तियार काकी की स्मृति में कुबुतमीनार का निर्माण करवाया गया था। समकालीन इस्लामिक साहित्य में ऐसा उल्लेख है। सन् 1210 ई. में चौगान (पोलो) खेलते हुए घोड़े से गिरकर ऐबक की मृत्यु हुई।

M4KKRZ

इल्तुतमिश (1210–1236 ई.) :

यह ऐबक का दामाद एवं उत्तराधिकारी था। इसे तुर्क साम्राज्य का वास्तविक संगठनकर्ता माना जा सकता है। 1226 ई. में इल्तुतमिश ने रणथम्भौर जीता। 1223 ई. में सुल्तान ने मालवा पर आक्रमण कर भिल्ला के दुर्ग को जीता। ग्वालियर और जालौर पर भी इसका अधिकार हो गया था। ख्वारिज्म शाह के पुत्र मंगबरनी को सहायता नहीं देकर इल्तुतमिश ने मंगोल चंगेज खाँ से दुश्मनी मोल नहीं ली।

रजिया सुल्तान (1236–40 ई.) :

रूक्नुद्दीन फिरोजशाह की हत्या के बाद इल्तुतमिश की पुत्री रजिया सुल्तान बनी। इल्तुतमिश ने रजिया को उत्तराधिकारी चुना था। परम्परावादी व कट्टरपंथी तुर्की अमीरों ने रजिया का विरोध किया। रजिया ने पर्दा त्याग दिया था, और पुरुषों के समान 'कुबा' (कोट) व 'कुलाह' (टोपी) पहनने लगी। उसने मलिक जमालुद्दीन याकूत (अबीसीनिया निवासी) को अमीर अखूर (अश्वशाला का प्रधान) नियुक्त किया, जिससे तुर्क अमीर नाराज हो गये। सरहिन्द के शासक के विद्रोह को शांत करने के अभियान में याकूत की हत्या कर दी गई। बाद में रजिया ने अल्तूनिया से विवाह कर लिया, परन्तु 1240 ई. में उन दोनों को मार डाला गया। 1240 से 1242 ई. तक बहरामशाह, 1242 से 1246 ई. मसूदशाह एवं 1246 से 1265 ई. तक नासिरूद्दीन महमूद ने सत्ता संभाली। ये सभी अयोग्य शासक थे। नासिरूद्दीन महमूद के पीछे वास्तविक बल गयासुद्दीन बलबन का था।

बलबन (1265–1296 ई.) :

उलुग खाँ (बलबन) इल्तुतमिश के चहलगानी (चालीस) नामक तुर्की दासों के प्रसिद्ध दल से सम्बन्धित था। वह 1265 ई. में यह गद्दी पर बैठा। मंगोलों का सामना करने के लिये एक सैन्य विभाग 'दीवाने आरिज' को पुनर्गठित किया। उसने सिजदा और पाबोस (सम्राट के सम्मुख झुककर उसके पैरों को चूमना) की प्रथा को दरबार में शुरू किया। बलबन दिल्ली सल्तनत के प्रशासनिक ढाँचे के निर्माताओं में प्रमुख था। उसने शत्रुओं के प्रति लौह और रक्त की नीति अपनायी, जिसमें पुरुषों को मार दिया जाता था व बच्चों और स्त्रियों को गुलाम बनाया जाता था। 1286 ई. में बलबन की मृत्यु के बाद अमीरों के दलीय संघर्ष ने खूनी रूप ले लिया। क्यूमर्स का वध कर 1290 ई. में जलालुद्दीन खिलजी ने स्वयं को सुल्तान घोषित कर दिया।

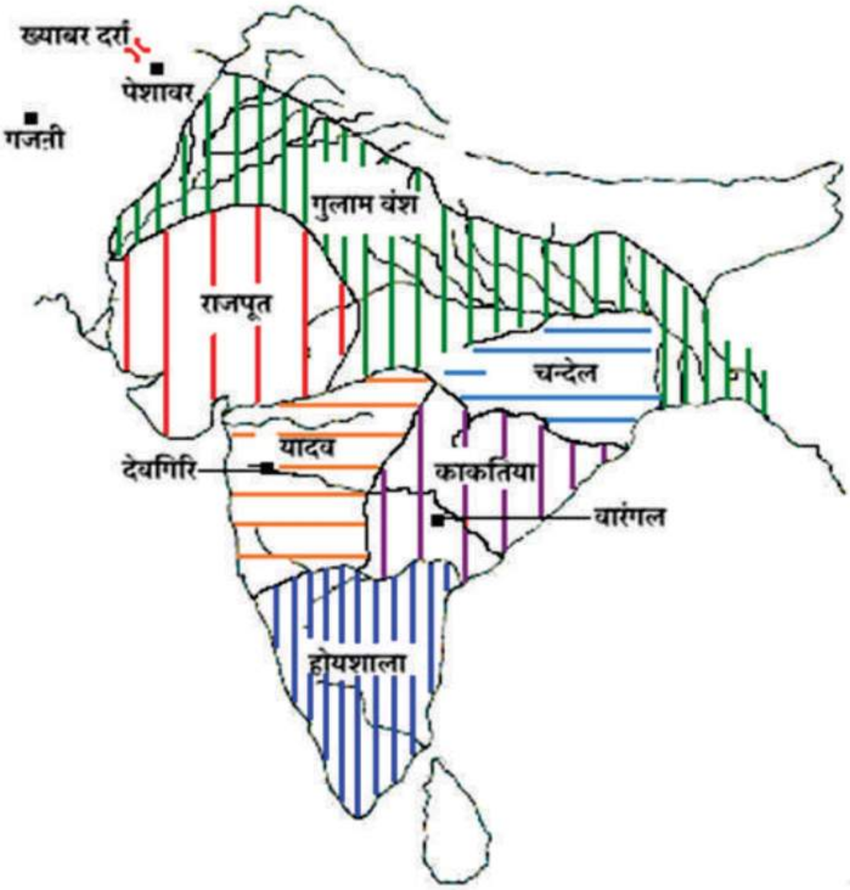

चित्र 2.1 : गुलाम वंश साम्राज्य

बलबन का राजत्व सिद्धान्त प्रसिद्ध रहा है। बलबन की मान्यता थी कि राजा पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि है। राजा साधारण जनता से अलग व्यक्तित्व है वह ईश्वर द्वारा प्रदत्त गुणों से युक्त है जो उसे शासन करने की शक्ति प्रदान करता है। बलवन तुर्क अमीरों के विद्रोह से परिचित था। इसी कारण उसने दरबार में कठोर अनुशासन बनाये रखा। कानून व्यवस्था की स्थिति को व्यवस्थित करना, चोरों, डाकुओं का दमन एवं राजपूत जमींदारों के शासन विरोधी विद्राहों को कुचलना उसके प्रमुख कार्य थे।

खिलजी वंश/साम्राज्य (1290–1320 ई.)– खिलजी वंश का प्रथम शासक जलालुद्दीन फिरोज खिलजी (1290 ई.–1296 ई.) था जो में 70 वर्ष का था। इसके भतीजे और दामाद अलाउद्दीन ने इलाहाबाद में उसका 1296 ई. में धोखे से हत्या करवा दी और स्वयं सुल्तान बन बैठा। अपने 20 वर्षों के शासन में कुछ अपने सुधारों को लेकर अलाउद्दीन की चर्चा होती है। उसने सिक्कों पर अपना उल्लेख 'द्वितीय सिकंदर' के रूप में करवाया। उसके शासन में कश्मीर व बंगाल शामिल नहीं थे। गुजरात के बघेला राजपूत राजा राय कर्णदेव के खिलाफ सैन्य अभियान किया। अलाउद्दीन ने 1301 ई. में रणथम्भौर और 1303 ई. में चित्तौड़ पर आक्रमण कर लूटा। गुजरात अभियान के दौरान उसे अपार धन सम्पदा प्राप्त हुई साथ ही एक हिन्दु से धर्मान्तरित मुस्लिम सेनानायक मलिक काफूर का साथ मिला। इस मलिक काफूर की सहायता से ही अलाउद्दीन खिलजी दक्षिण भारत में प्रवेश कर सका। मलिक काफूर ने देवगिरि, होयसल राज्य एवं पांड्य राज्य पर आक्रमण किये। अमीर खुसरों के अनुसार काफूर रामेश्वरम् तक पहुँचा। अलाउद्दीन के समय में राजस्व का ढांचा पुनः निर्मित किया गया। विद्रोहों पर नियंत्रण के लिये उसने चार आदेश जारी किए –अमीर वर्ग की सम्पत्ति जब्त करना एवं खालसा भूमि को कृषि योग्य बनाकर राजस्व में वृद्धि करना, दिल्ली में मद्य निषेध, गुप्तचर प्रणाली का गठन, अमीरों के परस्पर मेल–मिलाप रोक लगाना। उसने खलीफा की सत्ता को मान्यता देते हुए स्वयं ने 'यस्मिन–उल –खिलाफत–नासिरी–अमीर–उल–मुमिनिन' की उपाधि धारण की। 'खजाइनुल फुतूह' में अमीर खुसरो ने अलाउद्दीन को 'विश्व का सुल्तान' और 'जनता का चरवाहा'

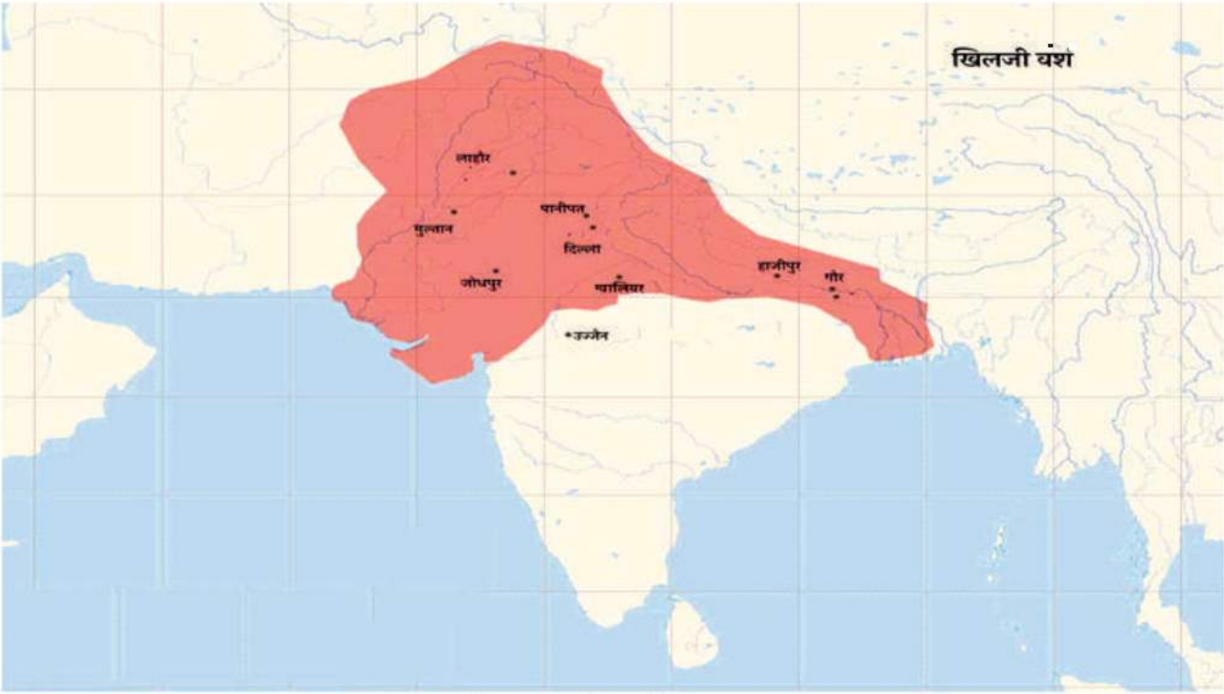

चित्र 2.2 : खिलजी साम्राज्य

जैसी पदवियों से विभूषित किया है। सुल्तान ने पुलिस, गुप्तचर, डाक पद्धति एवं प्रान्तीय प्रशासन में कई सुधार किये। सबसे महत्वपूर्ण सुधार बाजार नियंत्रण था। दीवान–ए–रियासत (व्यापार का नियंत्रक), शाहना या दण्डाधिकारी (बाजार का दरोगा), मुहतसिब (जनसाधारण का रक्षक एवं नाप–तौल का निरीक्षण कर्ता), बरीद–ए–मुमालिक (गुप्तचर अधिकारी) आदि नये पद सृजित कर प्रशासन को ठीक किया।

उसने अपनी एक विशाल सेना के रख–रखाव हेतु आर्थिक सुधार किए। मोलभाव सुनिश्चित करके सुल्तान ने कालाबाजारी और मुनाफाखोरी पर रोक लगा दी। सराए–ए–अदल स्थानीय एवं विदेशी वस्तुओं का बाजार था, अलाउद्दीन पहला शासक था जिसने सैनिकों को नकद वेतन दिया।

1303 ई. में अलाउद्दीन ने अलाई किला अथवा कोश ए सीरी (कुश्के सीरी) बनवाया, जिसमें सात द्वार थे। 1316 ई. में अलाउद्दीन की मृत्यु के बाद उसका पुत्र कुबुबुद्दीन मुबारक खिलजी शासक बना। उसने अपने पिता के सभी कठोर आदेशों को रद्द कर दिया और स्वयं को खलीफा घोषित कर 'उल–वासिक–बिल्लाह' की उपाधि धारण की। इसकी हत्या के बाद नासिरूद्दीन खुसरव शाह सुल्तान बना जो खिलजी वंश का अंतिम शासक था।

तुगलक शासनकाल

तुगलक वंश : खुसरव शाह की हत्या करके गाजी मलिक अथवा तुगलक गाजी गयासुद्दीन तुगलक 1320 ई. में दिल्ली का सुल्तान बना। सुल्तान बनते ही उसे प्रान्तीय विद्रोहों का सामना करना पड़ा। तेलंगाना के राजा प्रताप रुद्रदेव के खिलाफ उसने अपने पुत्र जूना खां को वारंगल भेजा। जाजनगर (उड़ीसा) में सैन्य अभियान किया गया जिसमें उलूग खां (जूना खां) की विजय हुई। गयासुद्दीन का अंतिम सैनिक अभियान बंगाल के विद्रोह का दमन था। दिल्ली वापसी पर आयोजित स्वागत समारोह में एक लकड़ी के भवन से गिरने से 1325 ई. में उसकी मृत्यु हो गई। तत्पश्चात् इसका पुत्र जूना खां मुहम्मद तुगलक के नाम से सुल्तान बना। उसका नाम कई संज्ञाओं से जोड़ा गया – ''अंतर्विरोधों का विस्मयकारी मिश्रण'', रक्त का प्यासा आदि। मुहम्मद तुगलक के समय तुगलक साम्राज्य 23 मुक्तों (प्रान्तों) में बँटा हुआ था। बरनी सुल्तान की पाँच मुख्य योजनाओं का वर्णन करता है – दोआब में कर वृद्धि, देवगिरि को राजधानी बनाना, सांकेतिक मुद्रा का प्रचलन, खुरासान पर आक्रमण, कराचिल की ओर अभियान।

सुल्तान ने 1327 से 1335 ई. तक देवगिरि को अपनी राजधानी बनाकर रखा और उसका नाम दौलताबाद रखा। 1330 ई. में तांबे एवं कांसे के मिश्रित सांकेतिक सिक्के चलाए। लोगों ने जाली सिक्के बनाना आरम्भ कर दिया। अतः सांकेतिक मुद्रा बंद करनी पड़ी। मोरक्को का यात्री इब्नबतूता लगभग 1333 ई. में भारत आया, सुल्तान ने उसे दिल्ली का काजी नियुक्त किया तथा 1342 ई. में राजदूत बनाकर चीन भेजा। 1351 ई. में मुहमद तुगलक की मृत्यु हो गई।

1351 ई. में फिरोजशाह तुगलक सुल्तान बना जो मुहम्मद तुगलक का चचेरा भाई था। बंगाल के हाजी इलियास के स्वतंत्र हो जाने से उसके विरूद्ध फिरोजशाह ने दो बार सैन्य अभियान किया परन्तु असफल रहा। फिरोजशाह ने सरकारी एवं सेना की नौकरी को वंशानुगत बना दिया एवं योग्यता की जाँच करने की प्रणाली का त्याग कर दिया। उसने अपने पुत्र फतह खां को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर सिक्कों पर अपने नाम के साथ उसका नाम भी अंकित करवाया। फिरोज ने भवन निर्माण कला को अत्यधिक महत्व दिया। हिसार फिरोजा, फिरोजाबाद एवं जौनपुर आदि नगर बसाए । टोपरा तथा मेरठ से अशोक स्तम्भ दिल्ली लाए गए परन्तु विद्वान इन्हें पढ़ ना सके। फिरोज की सबसे बड़ी उपलब्धि थी हाँसी तथा सिरसा के क्षेत्रों में पानी की कमी दूर करने के लिए नहरों की खुदाई। एक नहर सतलज नदी से दीपालपुर के तथा दूसरी यमुना नदी से सिरमूर के पास खुदवाई गयी। उपज वृद्धि करने तथा अकाल से निपटने हेतु ठोस नीति अनपाई गयी। फिरोज तुगलक भी कट्टरवादी इस्लामिक अमीरों के हाथों में रहा। उसने न केवल बाह्मणों पर जजिया नामक कर लगाया बल्कि मुस्लिम विचारधारा शिया समर्थक व्यक्तियों को मृत्युदण्ड भी दिया। गैर इस्लामी सजाएँ समाप्त कर दी गयी। गैर शरीयत कर (24) हटा दिये गए, केवल चार मुख्य कर रखे खराज, जकात, खम्स तथा जजिया रखे गए। दासों की संख्या में असाधारण वृद्धि (1,80,000) हुई और दीवान–ए–बंदगान के नाम से दासों के नाम से नया विभाग भी खोला गया। फिरोज ने दिल्ली में खरबूजों तथा अंगूरों की खेती को प्रोत्साहित किया और अनेक बाग लगवाये। 1388 ई. में फिरोजशाह की मृत्यु हुई। तुगलक वंश का अंतिम शासक नासिरूद्दीन महमूद था। इसी समय 1398 ई. में तुर्क आक्रांता तैमूर लंग ने भारत पर आक्रमण कर लूटपाट की थी।

सैयद वंश :

तैमूर ने दिल्ली को जीतकर खिज्र खां को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। खिज्र खां ने ही सैयद वंश की स्थापना की। 1414 से 1421 ई. तक शासन करने के बाद भी खिज्र खां ने न तो कभी शाह की उपाधि धारण की और न ही अपने नाम के सिक्के चलाए। इसके बाद मुबारक शाह 1421 से 1434 ई. तक शासक रहा। इसने सर्व शाह की उपाधि धारण की।

लोदी वंश :

अन्तिम सैयद शासक आलमशाह ने स्वेच्छापूर्वक दिल्ली का शासन त्याग दिया और बहलोल लोदी ने 1451 ई. में

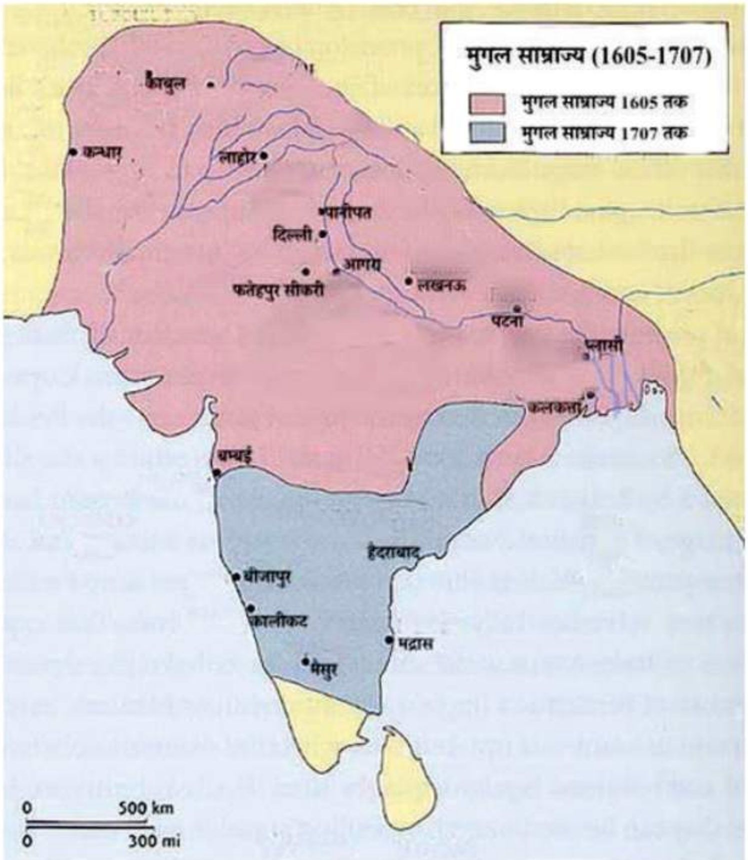

चित्र 2.3 : मुगल साम्राज्य

दिल्ली पर अधिकार कर लिया। दिल्ली पर तुर्कों के बाद पहली बार अफगान साम्राज्य का शासन हुआ। उसने जौनपुर के महमूद शाह शर्की के दिल्ली पर अधिकार करने के प्रयास को असफल कर दिया। 38 वर्ष शासन करने के बाद 1489 ई. में उसकी मृत्यु हो गई। इसके बाद इसका दूसरा पुत्र निजामशाह सिकन्दरशाह की उपाधि धारण कर सुल्तान बना। तिरहुत, बिहार एवं बंगाल तक उसने साम्राज्य विस्तार किया। इसका न्याय प्रबंध एवं राजस्व सुधार प्रसिद्ध है। भूमि की नाप और उसके आधार पर भूमिकर नियत करने का कार्य किया। एक गज चलाया जो प्रायः 30 इंच का होता था। यह गज लम्बे समय तक सिकन्दरीगज के नाम से चलता रहा। इटावा, बयाना, कोल, ग्वालियर एवं धौलपुर के शासकों को अधीन रखने के अभिप्राय से उसने 1506 ई. में आगरा नगर का निर्माण करवाया। उसका उपनाम 'गुलरु खाँ' था। इसी उपनाम से कविता भी लिखता था। नवबर 1517 ई. में उसकी मृत्यु के बाद उसका पुत्र इब्राहिम लोदी आगरा में गद्दी पर बैठा। 1517–1518 ई. में इब्राहिम लोदी व राणा सांगा के मध्य युद्ध हुआ, जिसमें लोदियों की हार हुई। 1526 ई. में पानीपत के मैदान में सिकन्दर बाबर से युद्ध में हार गया। इतिहास में यह युद्ध पानीपत के प्रथम युद्ध के नाम से प्रसिद्ध है। यह युद्ध युगान्तकारी सिद्ध हुआ और भारत में मुगल वंश की स्थापना हुई।

सल्तनत कालीन प्रशासन :

सुल्तान : सुल्तान की उपाधि तुर्की शासकों द्वारा प्रारंभ की गयी। महमूद गजनवी सुल्तान की उपाधि धारण करने वाला पहला शासक था। राज्य की सम्पूर्ण शक्ति सुल्तान के हाथ में थी। वह पूर्णतया प्रधान न्यायाधीश, राजनीति एवं मजहब दोनों क्षेत्रों का अधिपति होता था। सुल्तानों से अपेक्षा की जाती थी कि वे उलेमा वर्ग की राय माने।

अमीर : सुल्तान की शक्ति पर अमीर वर्ग का प्रभाव रहा। अमीरों के दो वर्ग तुर्क तथा गैर तुर्क थे। इल्तुतमिश के काल में चालीस अमीरों का समूह चहलगानी कहलाता था। शासन की योग्यता एवं अयोग्यता के अनुसार अमीरों का दरबार में प्रभाव कम–ज्यादा होता रहा।

केन्द्रीय शासन संस्था मजलिस–ए–खलवत मंत्री परिषद् की तरह होती थी। वजीर, आरिजे मुमालिक, दीवाने इंशा, दीवाने रिसालत इसके चार स्तंभ थे।

वजीर का कार्यालय दीवाने–ए–विजारत कहलाता था। इसे वित्त विभाग कहा जा सकता है। मुस्तौफी (महालेखा परीक्षक), खजीन (खजांची), मजमआदार (हिसाब संग्रहकर्ता) इस विभाग के कर्मचारी होते थे।

जलालुद्दीन खिलजी ने दीवाने वकूफ एवं अलाउद्दीन ने दीवान–ए–मुस्तखराज विभाग की स्थापना की थी। ये वित्त विभाग के अंतर्गत ही आते थे। मुहम्मद तुगलक ने भूमि को कृषि योग्य बनाने हेतु दीवाने–अमीर–कोही की स्थापना की।

दीवाने इंशा पर शाही पत्र व्यवहार का दायित्व था। दीवाने–रियासत का कार्य विदेश मंत्री की तरह था। सद्र–उस सुदूर धर्म विभाग का प्रमुख होता था। इसका कोष अलग होता था। जिसमें जकात से प्राप्त धन एकत्रित होता था। काजी उल–कुजात (न्याय), बरीद–ए–मुमालिक (सूचना) के विभाग थे। दरबार एवं राजमहल के लिए छः कर्मचारी होते थे – वकीर–ए–दर, बारबक, अमीर–ए–हाजिब, अमीर– ए–शिकार, अमीर मजलिस, सर–ए–जहाँदार। सल्तनत काल सैन्य धर्म सापेक्ष राजतंत्र कहा जा सकता है। युद्ध के समय लूट के सामान को 'खम्स' कहा जाता था। प्रान्तीय शासन केन्द्रीय शासन का प्रतिरूप था। प्रांतपतियों को वली या नाजिम कहा जाता था। प्रांतपति की नियुक्ति सुल्तान द्वारा होती थी। शिक जिले का राजस्व अधिकारी होता था।

अन्ततः 1206 से 1526 ई. तक दिल्ली की सल्तनतकाल में साम्राज्य सीमा तत्कालीन सुल्तान की सैनिक शक्ति के अनुसार घटती–बढ़ती रही।

(ii) मुगलकालीन भारत (1526 से 1858 ई. तक)

बाबर 1526 ई. में पानीपत के प्रथम युद्ध में इब्राहिम लोदी को परास्त कर भारत में मुगल साम्राज्य का संस्थापक बना। यह तुर्क मुसलमान था और तैमूर का वंशज था। चुगताई तुर्क वंश से सम्बन्धित होने के साथ–साथ मंगोल सेना नायक चंगेज खां के वंश से भी इसका ताल्लुक था। इसकी माँ चंगेज खां की वंशज थी। जहीरूद्दीन मोहम्मद बाबर प्रारंभ में पिता की मृत्यु के बाद फरगना की गद्दी पर 'बादशाह' की उपाधि के साथ बैठा। बादशाह की उपाधि धारण करने वाला यह पहला तैमूर वंशीय शासक था। आगरा से 40 कि.मी. दूर खानवा में बाबर एवं राणा सांगा का युद्ध मार्च 1527 ई. में हुआ। बाबर ने यह युद्ध 'तुलगुमा' पद्धति से लड़ा एवं जेहाद का नारा दिया। विजयी होने के बाद बाबर ने गाजी की उपाधि धारण की। 1528 ई. में बाबर ने चंदेरी के मेदिनीराय को परास्त किया। 1529 ई. में घाघरा के युद्ध में बाबर ने अफगानों को परास्त किया। बाबर की मृत्यु 26 दिसम्बर 1530 ई. को हुई। इसे यमुना के किनारे आगरा में रामबाग में दफनाया गया बाद में बाबर की इच्छा के अनुसार उसे काबुल में दफनाया गया। बाबर ने अपनी दिनचर्या की पुस्तक तुर्की भाषा में लिखी थी, जिसका नाम बाबरनामा या तुजूके बाबरी है। अब्दुर्रहीम खानखाना ने इसे बाद में फारसी में अनूदित किया।

चित्र 2.3 : शेरशाह सूरी कालीन सिक्के

हुमायूँ –

बाबर के बाद उसका पुत्र नासिरूद्दीन हुमायूँ शासक बना। हुमायूँ ने अपने भाई कामरान को काबुल और कंधार, असकरी को संभल, हिंदाल को अलवर व मेवात एवं अपने चचेरे भाई सुलेमान को बदख्वाँ प्रदेश दिया। हुमायूँ ने "दीन पनाह" नामक नये शहर की स्थापना की थी। उसने मालवा व गुजरात पर आक्रमण किया। हुमायूँ एवं अफगान शासक शेर खाँ के मध्य बक्सर के निकट चौसा नामक स्थान पर 1539 ई. में युद्ध हुआ, जिसमें मुगलों की पराजय हुई। चौसा की जीत के बाद शेर खाँ ने 'शेरशाह' की उपाधि धारण की, और अपने नाम के सिक्के चलाए। शेरशाह का वास्तविक नाम फरीद खाँ था। 1540 ई. में कन्नौज या बिलग्राम का युद्ध शेरशाह एवं हुमायूँ के मध्य हुआ। हुमायूँ हार कर भाग गया। दिल्ली की सल्तनत शेरशाह के अधिकार में चली गई। निर्वासित जीवन में ही उसने भटकल के पास शेख अली अख्तर की लड़की हमीदा से शादी की जो आगे चलकर अकबर की माँ बनी। धीरे–धीरे हुमायूँ ने कन्धार व काबुल को जीता। हिन्दुस्तान को पुनः जीतने के प्रयास में 1555 ई. में उसने लाहौर पर कब्जा कर लिया। उसने नसीब खाँ एवं तातार खाँ के नेतृत्व वाली अफगान सेना को मच्छीवारा के युद्ध में हराकर पंजाब पर अधिकार किया। जून 1555 ई. में सरहिन्द के निकट उसने अफगानों को फिर परास्त किया। अफगानों का नेतृत्व सिकन्दर सूर और मुगलों का नेतृत्व बैरम खां ने किया। इसके बाद 23 जुलाई 1555 ई. को हुमायूँ दूसरी बार दिल्ली की गद्दी पर बैठा, लेकिन कुछ समय बाद ही 24 जनवरी 1556 ई. वह को दीनपनाह में स्थित पुस्तकालय की सीढ़ियों से फिसल गया और गहरी चोट के कारण मर गया। हुमायूँ अफीम के नशे में चूर रहता था। वह ज्योतिष में आस्था रखता था, इसलिए उसने सप्ताह में सातों दिन सात रंग के कपड़े पहनने का नियम बनाया था।

सूर साम्राज्य :–

सूर साम्राज्य का संस्थापक फरीद (शेरा खाँ) हसन खाँ का पुत्र था जो जौनपुर राज्य के अन्तर्गत सासाराम (बिहार) का जमींदार था। दक्षिणी बिहार के तत्कालीन शासक बहार खाँ ने निहत्थे फरीद द्वारा शेर मार दिये जाने पर उसे शेर खाँ की उपाधि प्रदान की। उसका साम्राज्य पश्चिम कन्नौज से लेकर पूर्व में असम की पहाड़ियों तक तथा उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में बंगाल की खाड़ी तक फैला हुआ था। मालवा भी शेरशाह ने जीत लिया था। 1544 ई. में मालदेव को हराकर शेरशाह ने अजमेर, जोधपुर एवं मेवाड़ पर अधिकार कर लिया था। शेरशाह ने मालदेव से युद्ध बड़ी मुश्किल से जीता था। जबकि जैता कूँपा ने वीरता पूर्वक संघर्ष किया तभी शेरशाह ने कहा था "मैं मुट्ठी भर बाजरे के लिए हिन्दुस्तान की सल्तनत खो देता।" मेवाड़ पर भी उसका सांकेतिक अधिकार ही हो पाया था। 1544 ई. में कालिंजर के युद्ध के दौरान बारूद में विस्फोट होने से को शेरशाह की मृत्यु हो गयी। शेरशाह के बाद इस्लामशाह ने 1553 ई. तक शासन किया लेकिन बाद में अयोग्य उत्तराधिकारियों के आपसी संघर्ष से सूर साम्राज्य का पतन हुआ। शेरशाह के सुधार एवं निर्माण प्रसिद्ध हैं। उसने भूमि माप एवं लगान को व्यवस्थित कर गल्लाबख्शी या बंटाई, नश्क, मुक्ताई या कनकूत और नकदी या जब्ती प्रणाली प्रचलित की। 4 बड़ी सड़कें एवं अनेक सरायों का निर्माण करवाया। उसकी सबसे लम्बी सड़क बंगाल के सोनार गांव से लेकर पेशावर तक थी, जिसका अस्तित्व आज भी है। यह सड़क ग्रांड ट्रंक रोड के नाम से विख्यात है। मुद्रा ढलाई में सुधार करते हुए उसने तांबे का 380 ग्रेन का दाम तथा चांदी का 178 ग्रेन दाम का रुपया जारी किया। सासाराम (बिहार) में एक झील के मध्य अपने मकबरे का निर्माण करवाया। यह मकबरा डमरु की आकृति वाला दिखाई पड़ता है, जिस पर हिन्दू मंदिरों का प्रभाव है।

अकबर (1556–1605 ई.):– अकबर का जन्म अमरकोट (पाकिस्तान) के किले में 1542 ई. में हुआ। 13 वर्ष की आयु में 14 फरवरी, 1556 ई. को 'कलानौर' में ईंटों का सिंहासन बनाकर बैरम खाँ ने उसका राज्याभिषेक किया। बैरम खाँ को उसका

संरक्षक बनाया गया। अफगान सेनापति हेमू एवं मुगल प्रतिनिधि बैरम खाँ के मध्य पानीपत की दूसरी लड़ाई 5 नवम्बर 1556 ई. को हुई। गर्दन में तीर लग जाने से हेमू बेहोश हो गया और अफगानों की हार हुई। हेमू बिहार के अफगान मुहम्मद आदिलशाह का सुयोग्य हिन्दू सेनापति था। वह 22 युद्धों में विजय प्राप्त कर चुका था व उसने राजा विक्रमजीत की उपाधि धारण की थी।

अकबर ने 1516 ई. में संगीत प्रेमी बाज बहादुर से मालवा, चुनार का किला, गोड़वाना का किला जीता। उसने सुर्जन हाड़ा से रणथम्भौर का किला भी जीत लिया। राजा रामचन्द्र ने कालिंजर का किला अकबर को सौंप दिया। 1570 ई. में मारवाड़ एवं बीकानेर दोनों ने अपने किले अकबर को दे दिये तथा मुजफ्फरशाह से गुजरात एवं दाउद खाँ से बंगाल का क्षेत्र भी अकबर ने छीन लिया।

महाराणा प्रताप (मेवाड़) का मानसिंह तथा आसफ खां के संयुक्त नेतृत्व में मुगल सेना के साथ हल्दीघाटी का विश्व प्रसिद्ध युद्ध 1576 ई. में हुआ, परन्तु मुगलों को सफलता प्राप्त नहीं हुई। प्रताप ने मुगलों की अधीनता स्वीकार नहीं की। मुगल सेना के लौटते ही प्रताप ने अपने क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया व सामान्तों को अपनी जागीरें प्रदान की।

काबुल (मिर्जा हकीम), कश्मीर (युसुफ), सिंध (मिर्जा जानीबेग), उड़ीसा (निसार खां), कन्धार (हुसैन मिर्जा), खालेद (अली खां) पर अकबर की मुगल सेना ने निर्णायक जीत प्राप्त की। अकबर ने खानदेश का नाम 'धनदेश' रखा। मुगल सेना ने चाँद बीबी के प्रबल प्रतिरोध का सामना करते हुए 1600 ई. में अहमदनगर पर विजय प्राप्त की। 1601 ई. में असीरगढ़ पर भी मुगल अधिकार हो गया। यह अकबर की अन्तिम विजय थी। 1564 ई. में मालवा के गवर्नर अब्दुल्ला खाँ के नेतृत्व में उजबेगों के विद्रोह कर दिया। अकबर ने उजबेगों के दोनों विद्रोहों को कुचल दिया। 1584 ई. में गुजरात के विद्रोहों को कुचलने के कारण अब्दुर्रहीम को 'खानखाना' की उपाधि दी गयी। युसुफजाहियों के हमले के समय राजा बीरबल (एक नवरत्न) की मृत्यु हो गई थी। अकबर स्वयं 1605 ई. में एक लम्बी बीमारी के बाद चल बसा। उसे सिकन्दरा के मकबरे में दफनाया गया। मकबरा चार बाग उद्यान परम्परा में बना, यह पाँच तला उंचा है और पिरामुडनुमा आकार लिए है। इसमें हिन्दू मन्दिर, बौद्ध

चित्र 2.5 : अकबर कालीन सिक्के

चित्र 2.6 : फतेहपुर सीकरी

विहार और मुस्लिम स्थापत्य शैली का सुन्दर समन्वय है।

अकबर ने गोवा से पुर्तगाली मिशनरियों को बुलवाया। उसने धर्मशास्त्रीय चर्चा करने के लिए फतेहपुर सीकरी में 1575 ई. में इबादतखाना बनवाया। 1581 ई. में उसने दीन–ए–इलाही नामक धर्म का प्रवर्तन किया। इस धर्म में सम्मिलित होने वाला पहला हिन्दू राजा बीरबल था। शेख मुबारिक ने अकबर को 'इनाम आदिल' (मुजतहिंद) घोषित किया। सूफी मत के चिश्ती संप्रदाय को संरक्षण दिया, लाहौर एवं आगरा में ईसाइयों को गिरजाघर बनवाया। उसने जैन मुनि हरिविजय सूरि को जगदगुरु की उपाधि से संरक्षण प्रदान किया। दीन–ए–इलाही धर्म का प्रधान पुरोहित अबुल फजल था। 1583 ई. में अकबर ने इलाही संवत् के नाम से एक नया कैलेण्डर जारी किया था।

राजपूतों के प्रति अपनाई गई नीति में अकबर ने वैवाहिक सम्बन्ध बनाना एवं शक्ति प्रदर्शन की युक्ति से राजपूतों की शक्ति को अपने अधीन करने का कार्य किया। अकबर के साथ सन्धि करने वालो में पहला राजपूत राजा कछवाहा भारमल था। उसने भगवान दास एवं राजा मानसिंह को दरबार में उच्च पदों पर नियुक्त किया डूँगरपुर, बाँसवाड़ा एवं प्रतापगढ़ के राजवंशों ने मुगल अधीनता स्वीकार कर ली, परन्तु वे पृथक ही बने रहे। 1564 ई. में अकबर ने जजिया कर समाप्त कर दिया।

फतेहपुर सीकरी 1569 से लेकर 1584 ई. तक शाही राजधानी रही। वहाँ का बुलन्द दरवाजा, जो मस्ज़िद के दक्षिणी द्वार पर है, वह अकबर के गुजरात विजय के स्मारक स्वरूप बनाया गया।

जहाँगीर (1605–1627 ई.):

शेख सलीम चिश्ती के नाम पर इसका नाम 'सलीम' रखा गया था। सैन्य सेवाओं के कारण सलीम को 12 हजारी मनसब प्राप्त था। 1599 ई. में सलीम ने अकबर के विरूद्ध विद्रोह कर दिया था। अकबर द्वारा दमन के लिए भेजे गये अबुल फ़जल का 1602 ई. में उसने वध करवा दिया। 1605 ई. में आगरा के किले में सलीम ने नरूद्दीन मुहम्मद जहांगीर बादशाह की उपाधि धारण कर मुगल सत्ता संभाली।

उसने सिक्ख गुरु अर्जुनदेव को मृत्यु दण्ड दिया था। जहांगीर की कन्धार विजय सैनिक तथा व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। 1611 ई. में जहांगीर ने मेहरूनिस्सा नामक विधवा से विवाह करके उसे 'नूरमहल' नूरजहाँ की उपाधि दी। बाद में उसे बादशाह बेगम बनाया गया। ब्रिटिश दूत कैप्टन हॉकिन्स तथा सर टामस रो उसके दरबार में आए थे। 1627 ई. में जहांगीर की मृत्यु हुई।

शाहजहाँ (1627–1658 ई.) –

इसका बचपन का नाम खुर्रम था। 1612 ई. में इसका विवाह आसफ खां की पुत्री अरजुमन्द बानो बेगम (मुमताज महल) के साथ हुआ। फरवरी 1628 ई. में आगरा में इसका राज्यारोहण हुआ। इसके काल में खानजहाँ लोदी, जुझार सिंह (बुंदेलों) का विद्रोह हुआ। शाहजहाँ ने 1632 ई. में पुर्तगालियों को हुगली में पराजित किया। उसने अहमदनगर का विलय मुगल साम्राज्य में कराया। बीजापुर के सुल्तान आदिलशाह को परास्त किया। 1652 ई. में शाहजहाँ ने अपने पुत्र औरंगजेब को दक्खन का वायसराय बनाया। 1657 ई. में औरंगजेब ने शाहजहाँ को आगरा के किले में कैद कर दिया। अपने भाइयों दारा, मुराद एवं शुजा को मारकर वह स्वयं गद्‌दी पर बैठ गया। 1666 ई. में शाहजहाँ की मृत्यु हुई। उत्तराधिकार हेतु धरमट का युद्ध दारा शिकोह एवं औरंगजेब के मध्य हुआ था। फ्रेंच यात्री बर्नियर टेवनियर एवं इटालियन यात्री मनूची ने शाहजहाँ के शासन काल का वर्णन किया है।

औरंगजेब (1658–1707 ई.) –

औरंगजेब ने शासक बनने के बाद असम, कूच बिहार, रंगपुर, कामरूप, मारवाड़ के राठौरों को पराजित किया। इसने राजा जयसिंह को दक्खन का गवर्नर नियुक्त किया। "पुरन्दर की सन्धि" जून 1665 ई. में शिवाजी एवं राजा जयसिंह के मध्य हुई। शिवाजी ने अपने 23 किले राजा जयसिंह को दिये। 1660 में शिवाजी राजा जयसिंह के प्रयासों से औरंगजेब के दरबार में पहुँचे मगर औरंगजेब द्वारा उनके साथ गरिमा युक्त व्यवहार नहीं किया गया अपितु षड़यत्र पूर्वक बंदी बना लिया गया। शिवाजी अपने सहयोगियों की चतुराई पूर्वक योजना से गुपत रूप से किले से निकल कर महाराष्ट्र चले गये। 1686 ई. में औरंगजेब ने स्वयं जाकर बीजापुर पर कब्जा किया एवं 1678 ई. में गोलकुण्डा पर भी अधिकार किया। उसके काल मे हिन्दू व्यापारियों पर 5 प्रतिशत कर बढ़ाया गया। 1669 ई. में मन्दिरों को ध्वस्त करने का आदेश औरंगजेब ने दिया। 1679 ई. में हिन्दुओं पर पुनः जजिया लगाया गया। औरंगजेब ने भी मजहब को एक औजार के रूप में प्रयोग किया। उसने अकबर के काल से चली आ रही प्रथा झरोखा दर्शन एवं संगीत पर रोक लगा दी। 1707 ई. में अहमदनगर में इसकी मृत्यु हो गयी। इसके शासनकाल में 1668 ई. में गोकुल के नेतृत्व में जाटों व 1672 ई. में सतनामियों ने विद्रोह किया। सिक्खों के गुरु तेगबहादुर ने भी औंरगजेब के अत्याचारों के विरूद्ध आवाज़ उठायी। इस कारण उन्हें मार दिया गया।

औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल वंश को कमजोर एवं अयोग्य उत्तराधिकारी मिले जिससे मुगल साम्राज्य का क्रमशः पतन होना प्रारम्भ हो गया। सन् 1707 ई. में बहादुरशाह मुगल तख्त पर बैठा।

सूरत की ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भी सन् 1711 में बहादुरशाह के दरबार में अपना शिष्ट मण्डल भेजा उस पर डोना जुलियाना डायस डा कोस्टा नामक एक ईसाई महिला का प्रभाव

देखने को मिलता है; जिसे खातुम, बीबी, फिदवी दुआगो जुलियाना की उपाधियाँ मिली हुई थी। उसने पुर्तगालियों के हितों की बड़ी रक्षा की।

1712 ई. से लेकर 1757 ई. तक मुगल दरबार एवं तख्त षड़यंत्र एवं हत्या का केन्द्र बनकर रह गया। तत्कालीन राजनीतिक शक्ति के रूप में उसका स्थान गौण हो गया था।

मुगलकालीन प्रशासन :—

मुगल शासन प्रणाली भारतीय तथा विदेशी प्रणालियों का मिला—जुला रूप थी। बादशाह शासन का अधिपति, सर्वेसर्वा वकील—ए—मुतलक (वजीर) बादशाह के बाद सबसे बड़ा अधिकारी था। प्रधान सद्र मीरे समा नाम के दीवान वित्त विभाग का प्रमुख था।

प्रांतीय शासन सूबों में विभक्त था, जो अकबर के समय 15 थे और औरंगजेब के समय बढ़कर 21 हो गये थे। इनमें सूबेदार, दीवान, सदर काजी, प्रांतीय बख्शी, कोतवाल आदि अधिकारी होते थे। जिले का शासन फौजदार, अमलगुजार (मालगुजारी का अधिकारी), बितिकची (सहायक), शिकदार (परगना प्रमुख), आमिल (मुन्सिफ), फोतदार (खजांची) एवं कानूनगो (पटवारियों का अधिकारी) के हाथों में था।

बादशाह प्रधान सेनापति होता था। सेना मनसबदारी प्रथा पर आधारित थी। मनसबदारी जात और सवार में विभक्त थी।

(iii) सत्ता के साथ प्रतिरोध एवं सहयोग राजस्थान के संदर्भ में:— राव शेखा, हम्मीर चौहान, महाराणा प्रताप, चंद्रसेन, बीकानेर का रायसिंह, सवाई जयसिंह एवं अमरसिंह राठौड़।

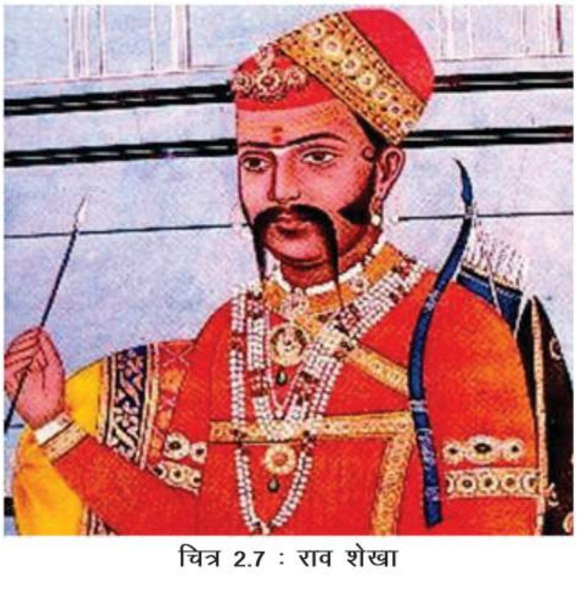

चित्र 2.7 : राव शेखा

राव शेखा : महाराव शेखा का जन्म 24 सितम्बर 1433 ई. को हुआ था। इनके पिता मोकल एवं माता का नाम निर्वाण था। राव मोकल आमेर (जयपुर) राज्य के अन्तर्गत आने वाले नान के शासक थे। 1445 ई. में बारह वर्ष की उम्र में शेखा ने अपने पिता का उत्तरदायित्व संभाला। आमेर (जयपुर) के शासक उदयकरण ने शेखा को महाराव की उपाधि प्रदान की थी। 16 वर्ष की उम्र में मुल्तान, सेवार, नगरचल के सांखला राजपूत पर अचानक आक्रमण कर विजय प्राप्त करना शेखा का पहला सफल अभियान था। 1473 ई. से 1477 ई. में राव शेखा ने पन्नी पठानों की सहायता से नोपसिंह जाटू से दादरी और अन्य जाटू राजपूतों से भिवानी पर विजय प्राप्त की। उसने इस्तरखान से हांसी, हेदाखान कायमखानी से हिसार को जीतकर अपने राज्य की सीमा का विस्तार किया। 1449 ई. में आमेरसर को अपने राज्य की राजधानी बनाया। आमेरसर में शेखा ने भगवान जगदीश का मन्दिर तथा 1477 ई. में शिकारगढ़ का किला बनवाया।

1488 ई. में रालावता नामक स्थान पर इनकी मृत्यु हुई जहाँ उसकी की छतरी बनी हुई है। महाराव शेखा ने अपने जीवनकाल में 52 युद्ध लड़े। उसे जयपुर के कछवाहा वंश के उपवर्ग 'शेखावत' का संस्थापक माना जाता है। उसकी पत्नी गंगा कुमारी ने आमेरसर किले के मुहानें पर कल्याणजी का मन्दिर बनवाया।

चित्र 2.8 : हम्मीर देव चौहान

हम्मीर देव चौहान (1282—1301 ई.)

बागभट्ट के बाद उसका पुत्र जैत्रसिंह (जयसिम्हा)

रणथम्भौर का शासक बना। जैत्रसिंह ने अपने जीवन काल में ही अपने छोटे पुत्र हम्मीर देव को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर 1282 ई. में उसका राज्यारोहण किया।

हम्मीर देव के सिंहासन पर बैठते ही दिग्विजय की नीति अपनाते हुए उसने भीमरस के राजा अर्जुन को पराजित करके माण्डलगढ़ से कर वसूल किया। दक्षिण के परमार शासक भोज को पराजित करके उत्तर की ओर चित्तौड़, आबू, वर्धनपुर (काठियावाड़), पुष्कर, चंपा होता हुआ वापस रणथम्भौर पहुँचा। रणथम्भौर पहुँचकर विजय के उपलक्ष्य में उसने 'कोटियजन' यज्ञ का आयोजन करवाया। हम्मीर ने 17 युद्ध लड़े जिनमें से 16 युद्धों में विजयी रहा।

दिल्ली के जलालुद्दीन खिलजी ने हम्मीर देव की बढ़ती हुई शक्ति को देखा तो रणथम्भौर की ओर रवाना हुआ।

जलालुद्दीन फिरोज खिलजी ने झाईन से रणथम्भौर की ओर बढ़कर दुर्ग की घेराबंदी कर दी। काफी दिनों के प्रयास के बाद सुल्तान को सफलता नहीं मिली तो घेरा उठाने का निर्णय लिया। जलालुद्दीन खिलजी हम्मीर देव की मजबूत मोर्चाबंदी को नष्ट करने में असफल रहा। अतः जून, 1291 ई. में सुल्तान रणथम्भौर दुर्ग का घेरा उठाकर दिल्ली की तरफ कूच कर गया।

1296 ई. में जलालुद्दीन का भतीजा व दामाद अलाउद्दीन खिलजी उसकी हत्या कर दिल्ली का सुल्तान बन गया। अलाउद्दीन खिलजी चौहानों की शक्ति को सहन नहीं कर सका और रणथम्भौर जीतने की योजना बनाने लगा। उसी समय उसे दुर्ग पर आक्रमण करने का बहाना भी मिल गया। हम्मीर महाकाव्य के अनुसार यह बहाना हम्मीर द्वारा अलाउद्दीन के बागी मंगोल मुहम्मद शाह को शरण देना था। मंगोल सेनापति मुहम्मद शाह व केहब्रू ने लूट का माल लेकर अलाउद्दीन की सेना से बगावत करके हम्मीर के पास शरण ली। हम्मीर ने अपनी शरण में आए हुए व्यक्तियों को देने से साफ इंकार कर दिया। अलाउद्दीन ने क्रोधित होकर रणथम्भौर पर आक्रमण करने के आदेश दे दिए।

अलाउद्दीन खिलजी ने 1299 ई. के अंत में उलूग खाँ और नुसरत खाँ के नेतृत्व में शाही सेना को रणथम्भौर दुर्ग पर आक्रमण करने के लिए भेजा। शाही सेना ने 'रणथम्भौर के मार्ग की कुँजी' कहलाने वाले झाईन पर आक्रमण किया। हम्मीर देव उस समय कोटियजन यज्ञ को समाप्त कर मौनव्रत धारण किये हुए था। हम्मीर ने अपने दो सैनिक अधिकारियों 'भीमसिंह और धर्मसिंह' को शत्रु का मुकाबला करने के लिए भेजा। दोनों ने अलाउद्दीन की सेना को बुरी तरह पराजित किया। भीमसिंह और धर्मसिंह लूट का माल लेकर वापस रणथम्भौर की ओर लौट पड़े। भीमसिंह और धर्मसिंह रणथम्भौर के दुर्ग के निकट पहुँचे तो उन्हें सूचना मिली की शत्रु की सेना पुनः आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ रही है। भीमसिंह ने धर्मसिंह को रणथम्भौर भेजकर स्वयं वापस शत्रुओं का मुकाबला करने के लिए रवाना हुआ। इस बार उलूग खाँ ने राजपूतों की सेना को परास्त किया। जिसमें भीमसिंह लड़ते हुए मारा गया। उलूग खाँ रणथम्भौर की ओर नहीं बढ़कर वापस दिल्ली लौट गया।

इसके बाद अलाउद्दीन खिलजी ने एक बड़ी सेना के साथ उलूग खाँ और नुसरत खाँ को पुनः रणथम्भौर पर आक्रमण करने के लिए भेजा। सेना ने रणथम्भौर दुर्ग की घेराबंदी कर उसकी प्राचीरों को तोड़ना शुरू किया तभी दुर्ग में से आये हुए एक गोले से नुसरत खाँ की मृत्यु हो गई। इसका पता तुर्की सेना को चला तो तुर्की सेना वहाँ से भागने लगी। यह देखकर उलूग खाँ ने अपने भाई अलाउद्दीन खिलजी के पास नुसरत खाँ की मृत्यु तथा सेना की वापसी का समाचार भेजकर और अधिक सेना भिजवाने का अनुरोध किया। अलाउद्दीन स्थिति की गंभीरता को देखते हुए एक विशाल सेना के साथ दिल्ली से रणथम्भौर की और स्वयं ही रवाना हो गया। दुर्ग पर घेरा डाला गया। यह घेरा काफी दिनों तक चला। जब वर्षा ऋतु निकट आने लगी और दिल्ली एवं अवध में भयंकर विद्रोह उत्पन्न होने की सूचनाएं सुल्तान को मिलने लगी तो वह काफी चिंतित हो गया। उसने छल–कपट का सहारा लेकर रणथम्भौर दुर्ग को विजय करने का निश्चय किया। अलाउद्दीन ने हम्मीर को संदेश भिजवाया कि वह उससे संधि करना चाहता है। हम्मीर ने अपने दो सेनापति 'रणमल' और 'रतिपाल' को संधि करने के लिए शाही शिविर में भिजवाया। सुल्तान ने रणमल और रतिपाल को दुर्ग का लालच देते हुए अपनी ओर मिला लिया। इन दोनों सेना नायकों के विश्वासघात के कारण दुर्ग के गुप्तमार्ग का पता तुर्कों को चला। गुप्तमार्ग से तुर्की सेना दुर्ग में पहुँची।

इतिहासकारों के अनुसार तुर्क सेना के द्वारा एक वर्ष लंबी घेराबंदी के कारण दुर्ग के भीतर खाद्य सामग्री का भयंकर अभाव हो गया था। ऐसी स्थिति में हम्मीर ने दुर्ग में बंद रहना उचित नहीं समझकर आक्रमण करने का निश्चय किया। आक्रमण करने से पूर्व राजपूत स्त्रियों ने हम्मीर की रानी रंगदेवी व उसकी पुत्री पदमला के नेतृत्व में जल जौहर किया। इसके बाद राजपूत सैनिकों ने केसरिया वस्त्र धारण कर दुर्ग के फाटक खोल दिये। दोनों पक्षों में जमकर युद्ध हुआ जिसमें हम्मीर वीरतापूर्वक लड़ता हुआ मारा गया।

11 जुलाई 1301 ई. को रणथम्भौर पर अलाउद्दीन खिलजी का शासन स्थापित हो गया। हम्मीर के विश्वासघाती सेना नायकों रणमल और रतिपाल को अलाउद्दीन खिलजी ने यह कहते हुए कि जो अपने स्वधर्मी राजा के प्रति निष्ठावान नहीं रह सके, उनसे भविष्य में स्वामी भक्ति की आशा कैसे की जा

सकती है दोनों को मरवा दिया।

रणथम्भौर के युद्ध में अलाउद्दीन खिलजी के साथ अमीर खुसरो नामक विद्वान भी था। हम्मीर हठ के लिए विश्व में प्रसिद्ध हुआ जिसने अपनी शरण में आये व्यक्तियों को नहीं लौटाया, चाहे उसके लिए उसे अपने पूरे परिवार की ही बलि क्यों न देनी पड़ी हो। हम्मीर के बारे में कहा गया है –

''सिंह सवन सत्पुरुश वचन, कदली फलत इक बार।
तिरिया–तेल, हम्मीर–हठ चढ़े न दूजी बार।।''

हम्मीर ने अपने पिता जयसिंह के 32 वर्षों के शासन की याद में रणथम्भौर दुर्ग में 32 खंभों की छतरी बनवाई जिसे 'न्याय की छतरी' भी कहते हैं। हम्मीर देव ने अपनी पुत्री पदमला के नाम पर 'पदमला तालाब' का निर्माण करवाया। हम्मीर के दरबार में 'बीजादित्य' नामक कवि रहता था।

हम्मीर की मृत्यु के साथ ही रणथम्भौर के चौहानों की शाखा समाप्त हो गई।

चित्र 2.9 : महाराणा प्रताप

महाराणा प्रताप (1572–1597 ई.) –

महाराणा प्रताप का जन्म विक्रम संवत् 1597 ज्येष्ठ शुक्ल तृतीय, रविवार (9 मई, 1540 ई.) को कुंभलगढ़ दुर्ग के (कटारगढ़) 'बादल महल' में हुआ। प्रताप महाराणा उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र था। उसकी माता का नाम जैवंता बाई (पाली नरेश अखैराज सोनगरा चौहान की पुत्री थी।) महाराणा प्रताप का बचपन कुंभलगढ़ दुर्ग में ही व्यतीत हुआ। महाराणा प्रताप का विवाह 1557 ई. में अजब दे पँवार के साथ हुआ जिनसे 16 मार्च, 1559 ई. में अमरसिंह का जन्म हुआ।

महाराणा प्रताप 32 वर्ष की उम्र के थे तब उनके पिता उदयसिंह की होली के दिन 28 फरवरी, 1572 ई. को गोगुंदा में मृत्यु हो गई। उदयसिंह का गोगुंदा में ही दाह संस्कार किया गया। यहां स्थित महादेव बावड़ी पर 28 फरवरी, 1572 ई. को मेवाड़ के सामन्तों एवं प्रजा ने प्रतापसिंह का महाराणा के रूप में राजतिलक किया। महाराणा उदयसिंह द्वारा नामित उत्तराधिकारी जगमाल को मेवाड़ के वरिष्ठ सामन्तों ने अपदस्थ कर दिया।

1570 ई. में अकबर का नागौर में दरबार लगा जिसमें मेवाड़ के अलावा अधिकतर राजपूतों ने अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली। अकबर ने प्रताप को अधीनता स्वीकार करवाने के लिए चार दल भेजे जिनमें–

पहली बार – जलाल खाँ, जिसको नवंबर, 1572 ई. में प्रताप के पास भेजा गया।

दूसरी बार – जून, 1573 ई. में मानसिंह (आमेर का शासक) को प्रताप को समझाने भेजा गया।

तीसरी बार – अक्टूबर, 1573 ई. में आमेर के भगवानदास को भेजा गया।

चौथी बार – दिसंबर, 1573 ई. में टोडरमल को भेजा गया।

ये चारों शिष्टमंडल प्रताप को समझाने में असफल रहे तो अकबर ने प्रताप को युद्ध में बंदी बनाने की योजना बनाई। बंदी बनाने की योजना अजमेर में स्थित किले में बनाई गई जिसमें आज संग्रहालय स्थित है तथा अंग्रेजो के समय का शस्त्रागार होने के कारण इसे मैगजीन भी कहते है। अकबर ने मानसिंह को इस युद्ध का मुख्य सेनापति बनाया तथा मानसिंह का सहयोगी आसफखाँ को नियुक्त किया गया।

मानसिंह 3 अप्रैल, 1576 ई. को शाही सेना लेकर अजमेर से रवाना हुआ उसने पहला पड़ाव मांडलगढ़ में डाला, 2 माह तक वहीं पर रहा उसके बाद वह आगे नाथद्वारा से लगे हुए खमनौर के मोलेला नामक गाँव के पास अपना पड़ाव डाला। उधर इस शाही सेना के आगमन की सूचना महाराणा प्रताप को मिल गई थी।

महाराणा प्रताप ने गोगुंदा और खमनौर की पहाड़ियों के मध्य स्थित हल्दीघाटी नामक तंग घाटी में अपना पड़ाव डाला। इस घाटी में एक बार में एक आदमी ही प्रवेश कर सकता था। इसलिए सैनिकों की कमी होते हुए भी महाराणा प्रताप के लिए मोर्चाबंदी के लिए यह सर्वोत्तम स्थान था जहाँ प्रताप के पहाड़ों से परिचित सैनिक आसानी से छिपकर आक्रमण कर सकते थे। वहीं मुगल सैनिक भटक कर मेवाड़ के सैनिकों से

चित्र 2.10 : महाराणा प्रताप द्वारा मानसिंह पर हमला

टकराकर या भूखे प्यासे मरकर जीवन गँवा सकते थे। अंत में दोनों सेनाएँ 18 जून, 1576 ई. को प्रातःकाल युद्ध भेरी के साथ आमने–सामने हुई।

राजपूतों ने मुगलों पर पहला वार इतना आक्रामक किया कि मुगल सैनिक चारों ओर जान बचा कर भागे। इस प्रथम चरण के युद्ध में हकीम खाँ सूर का नेतृत्व सफल रहा। मुगल इतिहासकार बँदायूनी, जो कि मुगल सेना के साथ था, वह स्वयं भी उस युद्ध से भाग खड़ा हुआ। मुगलों की आरक्षित फौज के प्रभारी मिहत्तर खाँ ने यह झूठी अफवाह फेला दी की 'बादशाह अकबर स्वयं शाही सेना लेकर आ रहे हैं।' अकबर के सहयोग की बात सुनकर मुगल सेना की हिम्मत बँधी और वो पुनः युद्ध के लिए तत्पर होकर आगे बढ़ी। राजपूत भी पहले मोर्चे में सफल होने के बाद बनास नदी के किनारे वाले मैदान में जिसे 'रक्तताल' कहते हैं, में आ जमें।

उसी समय मुगलों की शाही सेना ने प्रताप को चारों ओर से घेर लिया। बड़ी सादड़ी का झाला मन्ना सेना को चीरते हुए राणा के पास पहुँचा और महाराणा से निवेदन किया कि ''आप राजचिह्न उतार कर मुझे दे दीजिए और आप इस समय युद्ध के मैदान से चले जाएँ इसी में मेवाड़ की भलाई है।'' चेतक के घायल होने की स्थिति को देखकर राणा ने वैसा ही किया। राजचिह्न के बदलते ही सैंकड़ों तलवारें झाला मन्ना पर टूट पड़ी। झाला मन्ना इन प्रहारों का भरपूर सामना करते हुए वीरगति को प्राप्त हुआ।

महाराणा प्रताप का स्वामीभक्त घोड़ा चेतक बलीचा गाँव में स्थित एक छोटा नाला पार करते हुए परलोक सिधार गया।

वस्तुतः महाराणा प्रताप और अकबर का संघर्ष धार्मिक युद्ध नहीं था। यह दो राजनीतिक शक्तियों के मध्य वर्चस्व का संघर्ष था। यह भी उल्लेखनीय है कि महाराणा प्रताप का सेनापति हाकिम खान सूरी था, जबकि मुगल सेना का नेतृत्व राजा मानसिंह ने किया।

हल्दीघाटी युद्ध के बाद के संघर्ष–

हल्दीघाटी युद्ध के बाद मुगल सेना कुछ समय गोगुन्द में रही लेकिन रसद सामग्री के अभाव में सेना लौट गई। प्रताप ने कुभलगढ़ को अपनी नई राजधानी बनाकर नई छापामार युद्ध नीति को अपनाया। अकबर ने शाहबाज खां के नेतृत्व में तीन बार सेना भेजी 15 अक्टूबर 1577, 15 दिसम्बर 1578 और मई 1580। शाहबाज खाँ ने कुम्भलगढ़ और उसके आसपास के क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया। अकबर ने 1580 में अब्दुर्रहीम खानखाना के नेतृत्व में सेना भेजी लेकिन उसे विशेष सफलता नहीं मिली। 1582 में दिवेर का युद्ध हुआ। इस संघर्ष में प्रताप के

चित्र 2.11 : महाराणा प्रताप की समाधि (बान्डोली, चावण्ड)

पुत्र अमरसिह ने शाही सेना पर धावे बोले और विजयी रहा। इसके बाद कुम्भलगढ़ पर भी अधिकार कर लिया। प्रताप की गतिविधियों को रोकने के लिए अकबर ने जगन्नाथ कछवाह के नेतृत्व में सेना भेजी। प्रताप पुनः पहाड़ियों में चला गया। 1885 के बाद अकबर उत्तर–पश्चिम सीमा पर व्यस्त हो गया। अतः मेवाड़ की ओर कोई सेना नहीं भेजी। 1585 – 1597 ई. के मध्य प्रताप ने चित्तौड़ और माण्डल को छोड़कर अन्य क्षेत्रों को मुगलों से मुक्त करा लिया। 19 जनवरी 1597 में प्रताप की मृत्यु हो गई।

प्रताप की मृत्यु का समाचार अकबर के कानों तक पहुँचा तो उसे भी बड़ा दुख हुआ। इस स्थिति का वर्णन अकबर के दरबार में उपस्थित दुरसा आढा ने इस प्रकार किया, 'अस लेगो अणदाग पाग लेगो अणनामी गहलोत राण जीती गयो दसण मूँद रसणा उसी, नीसास मूक मरिया नयण तो मृत शाह प्रतापसी'' आशय यह था कि राणा प्रताप तेरी मृत्यु पर बादशाह ने दाँत में जीभ दबाई और निःश्वास से आँसू टपकाए क्योंकि तूने अपने घोड़े को नहीं दगवाया और अपनी पगड़ी को किसी के सामने नहीं झुकाया वास्तव में तू सब तरह से जीत गया।

विदेशी इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड ने हल्दीघाटी को 'मेवाड़ की थर्मोपल्ली' और दिवेर को 'मेवाड़ का मैराथन' कहा है।

राव चंद्रसेन (1562–1581 ई.) :

राव चंद्रसेन का जन्म 16 जुलाई, 1541 ई. हुआ। यह मालदेव झाला रानी स्वरूप दे का पुत्र था। स्वरूप दे ने मालदेव से कहकर चंद्रसेन को मारवाड़ का युवराज बनवाया था। मालदेव की मृत्यु हुई तब 31 दिसंबर, 1562 ई. चंद्रसेन भाईयों में छोटा होते हुए भी मारवाड़ का शासक बना। इसी कारण राव चंद्रसेन के दोनों भाई उससे नाराज हो गए। बड़े भाई राम ने अकबर की शरण में जाकर शाही सहायता की प्रार्थना की, अकबर भी इस समय इसी फिराक में था। अकबर ने शीघ्र ही हुसैन कुली खाँ के नेतृत्व में अपनी सेना जोधपुर की ओर भेजी, जिसने मई, 1564 ई. में जोधपुर के किले पर अधिकार कर लिया। मारवाड़ के राजा चंद्रसेन ने जोधपुर से भागकर भाद्राजूण में जाकर शरण ली। 1570 ई. में अकबर द्वारा लगाये गये नागौर दरबार में चन्द्रसेन गया परन्तु वहाँ पर अकबर के व्यवहार एवं अपने प्रतिस्पर्धी उदयसिंह को देखकर नागौर दरबार छोड़कर वहाँ से वापस चला आया।

इसका पता अकबर को चला तो उसने बीकानेर के रायसिंह को जोधपुर का अधिकारी नियुक्त कर दिया राव चंद्रसेन को दबाने के लिए अकबर ने अपनी सेना भाद्राजूण भेजी। भाद्राजूण से चंद्रसेन अपने भतीजे कल्ला (चंद्रसेन के भाई राम का पुत्र) के पास सोजत पहुँचा। यहाँ पर भी उसका पीछा करते हुए मुगल सेना आ गई। राव चंद्रसेन वहाँ से सिवाण (बाड़मेर) पहुँचा। सिवाण से चंद्रसेन सारण के पहाड़ों (पाली) में संचियाय नामक स्थान पर पहुँचा। जहाँ 11 जनवरी 1581 को उसका देहांत हो गया। वहीं पर चंद्रसेन की समाधि बनी हुई है। राव चंद्रसेन को विस्मृत नायक, भूला बिसरा राजा आदि नामों से भी जाना जाता है।

बीकानेर का रायसिंह (1574–1612 ई.) :

रायसिंह कल्याणमल राठौड़ का बड़ा पुत्र था। उसका जन्म 20 जुलाई 1541 ई. को हुआ। 1570 ई. में लगे नागौर दरबार में यह अकबर की शाही सेना में शामिल हो गया और

शीघ्र ही अकबर का विश्वासपात्र बन गया।

अकबर ने रायसिंह को सर्वप्रथम 1572 ई. में जोधपुर का अधिकारी बनाया। रायसिंह के पिता कल्याणमल की 25 सितंबर 1574 ई. को मृत्यु होने के बाद रायसिंह बीकानेर का शासक बना। रायसिंह जब जोधपुर की व्यवस्था संभाल रहा था, तभी इब्राहीम मिर्जा ने नागौर में विद्रोह कर दिया। रायसिंह ने कठौली नाम गाँव में उसका दमन किया।

सिरोही के देवड़ा सुरताण व बीजा देवड़ा के मध्य अनबन हो गई, तब रायसिंह ने सिरोही पर आक्रमण करके बीजा को राज्य से बाहर निकाल दिया और आधा सिरोही मुगलों के अधीन कर मेवाड़ से नाराज होकर आए महाराणा प्रताप के सौतेले भाई जगमाल को दे दिया। सुरताण ने मुगलों पर आक्रमण कर दिया। दोनों सेनाओं के मध्य 1583 ई. को 'दत्ताणी नामक स्थान' पर युद्ध हुआ। दत्ताणी के युद्ध में जगमाल की मृत्यु हो गई और सुरताण ने सिरोही पर वापस अपना अधिकार कर लिया। अकबर ने रायसिंह से प्रसन्न होकर 1593 ई. में उसे जूनागढ़ प्रदेश दिया। उसने उसे 1604 ई. में शमशाबाद तथा नूरपुर की जागीर व 'राय' की उपाधि दी। रायसिंह ने 1589–94 ई. के मध्य अपने प्रधानमंत्री कर्मचंद की देखरेख में जूनागढ़ (बीकानेर) का निर्माण करवाया तथा वहाँ एक प्रशस्ति लगवाई जिसे 'रायसिंह प्रशस्ति' के नाम से जाना जाता है। रायसिंह साहित्यकार भी था, उसने रायसिंह महोत्सव, वैद्यक वंशावली, ज्योतिश रत्नमाला, ज्योतिश ग्रंथों की भाषा पर बाल बोधिनी नामक टीका लिखी। 'कर्मचंद्रवंशोत्कीर्तनकं काव्यं' ग्रंथ में रायसिंह को ''राजेंद्र'' पुकारा गया है।

रायसिंह के शासन काल में बीकानेर में अकाल पड़ा। रायसिंह ने जगह–जगह 'सदाव्रत' खोले एवं पशुओं के लिए चारे–पानी की व्यवस्था की। बीकानेरी चित्रकला की शुरूआत रायसिंह के शासन काल में मानी जाती है। रायसिंह की मृत्यु दक्षिण भारत में एक स्थान पर बुरहानपुर में 21 जनवरी 1612 ई. को हुई। रायसिंह ने दक्षिण भारत में एक स्थान पर रेगिस्तान के फोग नामक झाड़ी को देखकर उससे वह लिपट गया तथा कहा कि–

''तूँ सैं देशी रूखड़ा, म्हैं परदेशी लोग।
म्हानें अकबर तेड़ियाँ, क्यों तूँ आयो फोग।।

अर्थात् तू देशी पौधा है, मैं परदेसी व्यक्ति हूँ। मुझे तो अकबर ने यहाँ जबरदस्ती भेजा है, पर हे! फोग तू यहाँ क्यों आया है?

सवाई जयसिंह / जयसिंह द्वितीय (1699–1743 ई) :–

जयसिंह का जन्म 3 सितम्बर 1688 ई. को हुआ। जयसिंह द्वितीय के पिता का नाम बिशनसिंह था। शुरू में इनका नाम विजयसिंह व इनके छोटे भाई का नाम जयसिंह था।

चित्र 2.12 : महाराज सवाई जयसिंह

औरंगजेब ने इनकी योग्यता से प्रभावित होकर इनका नाम जयसिंह तथा इनके छोटे भाई का नाम विजयसिंह कर दिया। 1699 ई. में सवाई जयसिंह के पिता बिसनसिंह की मृत्यु हुई। सवाई जयसिंह 19 दिसंबर 1699 ई. को आमेर का शासक बना।

फरवरी 1707 ई. में औरंगजेब की मृत्यु हो गई। औरंगजेब के पुत्रों में उत्तराधिकार युद्ध शुरू हो गया। औरंगजेब के चार पुत्र मुअज्जम, आजम, कामबख्श और अकबर थे। अकबर भारत छोड़कर पारस चला गया था। कामबख्श को राजा बनने की कोई इच्छा नहीं थी। अतः मुअज्जम व आजम दोनों के मध्य 1707 ई. में ''जाजऊ के मैदान'' (उत्तर प्रदेश) में युद्ध हुआ। सवाई जयसिंह ने इस युद्ध में भाग लेते हुए आजम का साथ दिया। मुअज्जम ने सवाई जयसिंह के भाई विजयसिंह को अपनी ओर मिला लिया। इस युद्ध में मुअज्जम की विजय हुई। जीतने के बाद मुअज्जम ने सर्वप्रथम अपना नाम बहादुरशाह प्रथम रखा। विजयसिंह को आमेर का शासक बनाया गया और आमेर का नाम 'इस्लामाबाद' और बाद में 'मोमिनाबाद' कर दिया गया। आमेर के शासक सवाई जयसिंह और मारवाड़ के शासक अजीतसिंह को बहादुरशाह ने सूबेदार नियुक्त किया। अमरसिंह द्वितीय ने शर्त रखी कि सवाई जयसिंह मेरी पुत्री चंद्रकुंवरी के साथ शादी करे और उसका पुत्र ही आमेर का आगामी राजा बने। जयसिंह ने यह शर्त मान ली। इसे 'देबारी समझौता' भी कहा जाता है।

अमरसिंह द्वितीय आमेर के सवाई जयसिंह व मारवाड़ के अजीतसिंह को सहायता देने को तैयार हो गया। इसका पता जब बहादुरशाह प्रथम को चला तो वह नाराज हुआ। कुछ समय बाद उसने दानों को माफ़ कर दिया।

भरतपुर रियासत में चूड़ामन ने विद्रोह कर दिया। रंगीला ने उसे दबाने के लिए 1722 ई. में जयसिंह को भेजा।

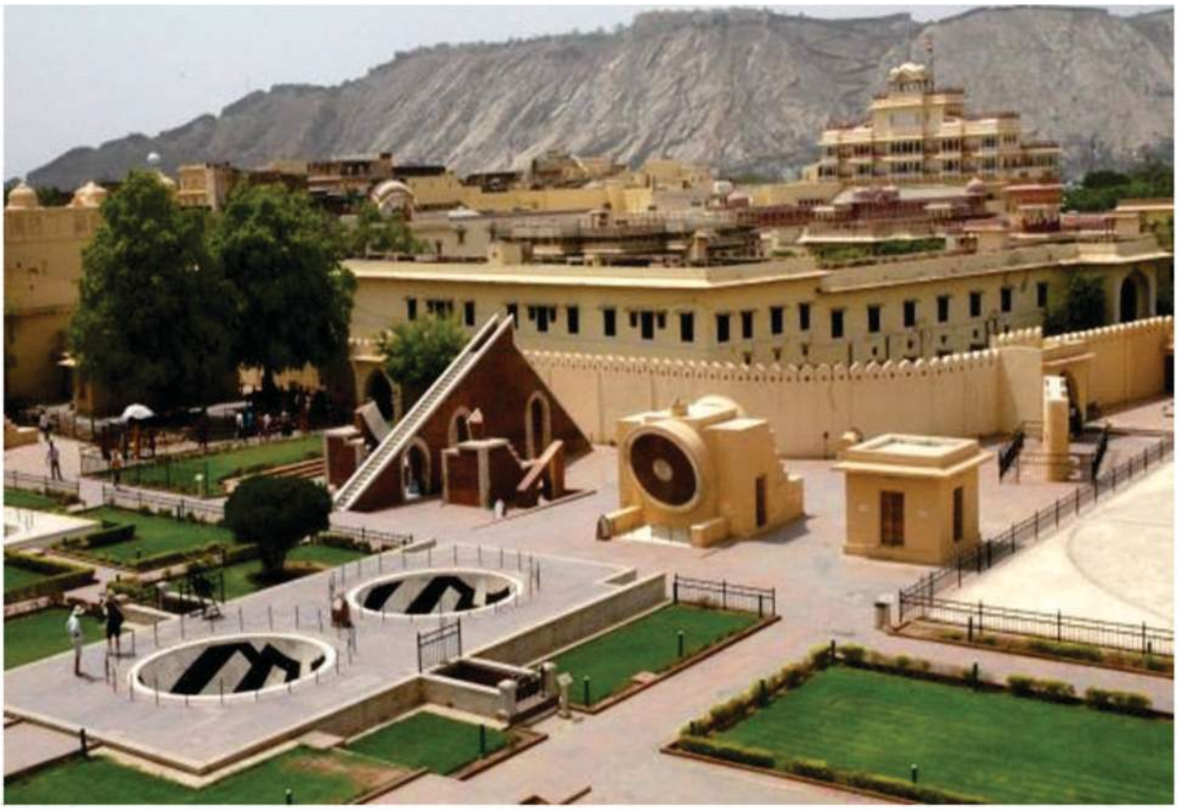

चित्र 2.13 : जंतर मंतर, जयपुर (सौर वेधशाला, सवाई जयसिंह द्वारा निर्मित)

जयसिंह ने चूडामन के भतीजे बदनसिंह को अपनी तरफ मिलाकर चूड़ामन को भरतपुर से खदेड़ दिया। जयसिंह ने बदनसिंह को 'ब्रजराज' की उपाधि व डीग की जागीर दी। जाटों के दमन से प्रसन्न होकर मुहम्मद शाह ने जयसिंह को 'राजराजेश्वर श्री राजाधिराज सवाई' की उपाधि से विभूषित किया।

सवाई जयसिंह ने 1725 ई. में नक्षत्रों की गति की गणना करने के लिए एक शुद्ध सारणी का निर्माण करवाया। जयसिंह ने ज्योतिश विद्या पर 'जयसिंह कारिका' नामक ग्रंथ लिखा। जयसिंह ने भारत में ज्योतिष के अध्ययन के लिए पाँच वैद्य शालाएँ बनवाईं ये जयपुर, दिल्ली, मथुरा, बनारस और उज्जैन में स्थित हुईं। जयपुर का जंतर–मंतर पाँचों वैधशालाओं में सबसे बड़ी वैधशाला है, जुलाई 2010 ई. में इसे यूनेस्कों की विश्व धरोहर सूची में सम्मिलित कर लिया गया है। जयपुर का प्राचीन नाम जयनगर था। सवाई जयसिंह ने आमेर की जगह जयपुर को कछवाहा राजवंश की राजधानी बनाया। जयपुर की स्थापना से पूर्व इस स्थान पर एक शिकार होदी स्थित थी। इसी होदी को सवाई जयसिंह ने बादल महल का रूप दे दिया और जयपुर शहर के निर्माण की शुरुआत की।

सवाई जयसिंह अंतिम हिंदू शासक था, जिसने 1740 ई. में कई यज्ञ करवाये। यज्ञ करने वाले ब्राह्मणों के रहने के लिए सवाई जयसिंह ने जलमहलों का निर्माण करवाया। 21 सितम्बर, 1743 ई. में रक्त विकार से जयसिंह की मृत्यु आमेर में हो गई।

अमरसिंह राठौड़ः–

जोधपुर के महाराजा गजसिंह के तीन पुत्र थे बड़ा

चित्र 2.14 : अमरसिंह राठौड़ (जोधपुर)

अमरसिंह, दूसरा जसवंत सिंह व तीसरा अचल सिंह जो कि बचपन में ही मर गया था। अमरसिंह राठौड़ पराक्रमी व निडर था। उसके पास उसी के स्वभाव के कई राजपूत युवक जमा हो गए। गजसिंह ने अनारा नामक पासवान के बहकावे में आकर अमरसिंह को राज्याधिकार से वंचित कर देश से निकाल दिया। अमरसिंह राठौड़ मुगल बादशाह की सेवा में जा पहुँचा। जहाँ उसकी बहादुरी से प्रसन्न होकर शाहजहाँ ने उसे 'राव' की उपाधि दी।

एक बार अमरसिंह राठौड़ 15 दिनों तक मुगल दरबार से अनुपस्थित रहा। बादशाह शाहजहाँ ने उससे उसकी अनुपस्थिति का कारण पूछा तो अमर ने स्वाभिमान के साथ उत्तर दिया कि, ''मैं केवल शिकार के लिए गया था अतः दरबार में नहीं आ सका। जहाँ तक जुर्माना अदा करने की बात है मेरी तलवार ही मेरी सम्पत्ति है।'' जुर्माने को वसूल करने के लिए बख्शी सलावत खाँ को उसके पास भेजा। अमरसिंह ने जुर्माना देने से इंकार कर दिया। बादशाह ने अमरसिंह को तुरंत हाजिर होने का आदेश भिजवाया। अमरसिंह राठौड़ ने आदेश का पालन किया और दीवाने खास में पहुँचकर बादशाह का अभिवादन किया। वहाँ पहुँचते ही दरबार में उपस्थित सलावत खाँ ने उसको गंवार कहा। यह शब्द अमरसिंह सुन नहीं सका और सलावत खाँ पर आक्रमण कर उसके सीने में कटार उतार दी। इसके बाद अमरसिंह ने बादशाह शाहजहाँ पर आक्रमण कर दिया, किंतु शाहजहाँ बच गया। भयभीत बादशाह जनाना महलों में भाग गया। अमरसिंह के साले अर्जुन गौड़ ने इनाम के लालच में धोखे से अमरसिंह पर आक्रमण कर उसे मार दिया। यह सुनकर अमरसिंह के सरदारों और सैनिकों के खून में उबाल आ गया और उन्होंने उसी समय दिल्ली जाकर शाहजहाँ के निवास स्थान लाल किले में बुखारा द्वार से प्रवेश किया। राठौड़ों की संख्या मुगलों की सेना के सामने नाममात्र की थी इसलिए सभी राठौड़ लड़ते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। लाल किले के बुखारा द्वार को उसी दिन ईंटों से बंद करा दिया गया और उसी दिन से वह द्वार 'अमरसिंह का फाटक' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह फाटक अनेक वर्षों तक बंद रहा परंतु 1809 ई. में जॉर्ज स्टील नामक अंग्रेज अफ़सर के आदेश से उसे खोला गया।

(iv) मराठों का इतिहास –

मराठा शक्ति का उत्कर्ष किसी एक व्यक्ति का कार्य न होकर, एक विशेष समय में उत्पन्न हुई, अस्थायी परिस्थितियों का ही परिणाम था। भारत के पश्चिम–दक्षिणी भाग में स्थित दक्कन के पठारों को सम्प्रति

HDS56G

महाराष्ट्र के नाम से जाना जाता है। अधिकांश भाग पठारी होने के कारण वहाँ के निवासी परिश्रमी और साहसी रहे हैं। मराठा कहे जाने वाले महाराष्ट्रवासी छोटे कद और मजबूत शरीर वाले होते हैं। गुरिल्ला युद्ध में कुशल होते थे। वे खुले युद्ध से भरसक बचते थे और अपने दुश्मनों पर छिप कर वार करते थे। 15वीं और 16वीं शताब्दी के धर्म–सुधार और भक्ति आन्दोलन ने सामाजिक एकता को और अधिक सुदृढ़ किया। दक्षिण में जन–साधारण आधारित इस धार्मिक आन्दोलन का नेतृत्व तुकाराम, रामदास, एकनाथ, वामन पंडित इत्यादि संतों और दार्शनिकों ने किया था। यह आंदोलन ऊँच–नीच, जाति व्यवस्था और कर्मकांड के विरुद्ध था, जिसने सभी के लिए 'भक्ति' द्वारा ईश्वर प्राप्ति का मार्ग दिखाया। मराठी भाषा बहुत सरल और व्यावहारिक थी।

चित्र 2.15 : छत्रपति शिवाजी महाराज

छत्रपति शिवाजी (1627–1680ई.):–

20 अप्रैल, 1627 ई. को शिवनेर के दुर्ग में शिवाजी का जन्म हुआ। वे शाहजी भोंसले की प्रथम पत्नी जीजाबाई के पुत्र थे। शाहजी बीजापुर के एक सामंत थे, जिन्होंने तुकाबाई मोहिते नामक एक अन्य स्त्री से विवाह कर लिया था। इसी कारण जीजाबाई उनसे अलग रहती थी। बालक शिवाजी का लालन–पालन उनके स्थानीय संरक्षक दादाजी कोणदेव तथा जीजाबाई के गुरू समर्थ स्वामी रामदास की देखरेख में हुआ। जिन्होंने उन्हें मातृभूमि की रक्षा के लिए प्रेरित किया। दादाजी कोंणदेव से उन्होंने सेना और शासन की शिक्षा पायी थी। 12 वर्ष की अल्पायु में शिवाजी ने अपने पिता से पूना की जागीर प्राप्त की। सर्वप्रथम 1646 ई. में 19 वर्ष की आयु में उन्होंने कुछ मावले युवको का एक दल बनाकर पूना के निकट स्थित तोरण दुर्ग पर अधिकार कर लिया। 1646 ई. में ही उन्होंने बीजापुर के सुल्तान से रायगढ़, चाकन तथा 1647 ई. में बारामती, इन्द्रपुर, सिंहगढ़

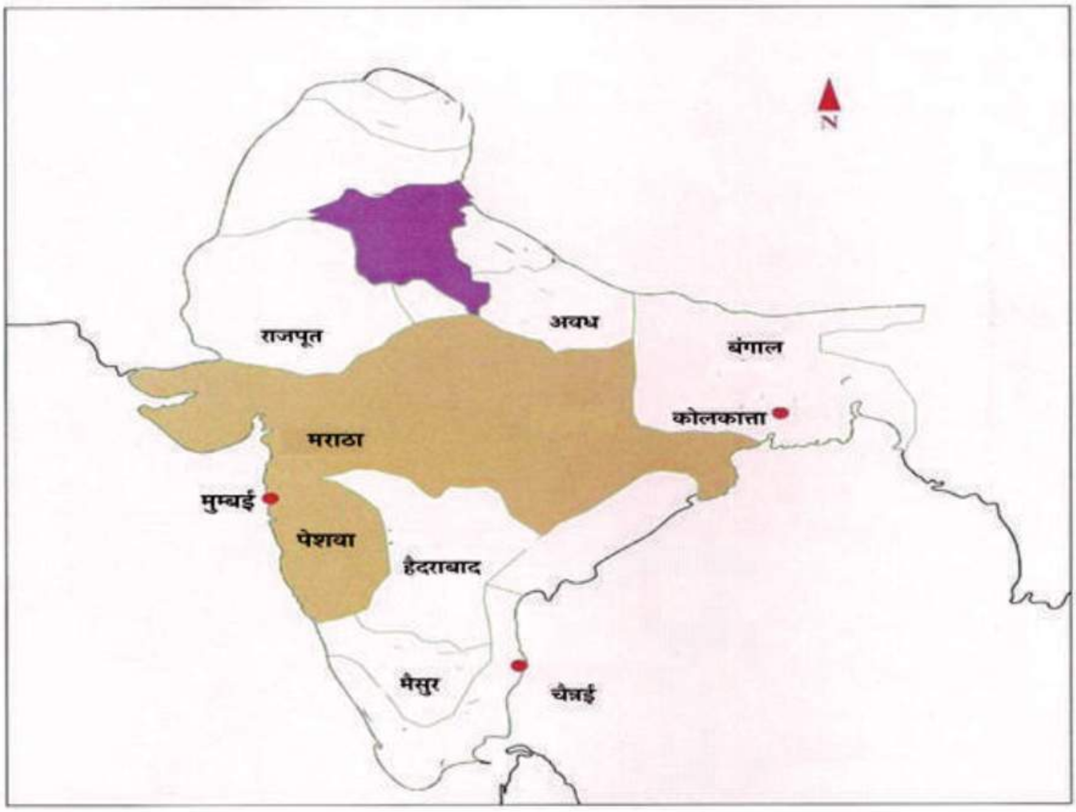

मानचित्र 2.16 : छत्रपति शिवाजी महाराज का साम्राज्य

चित्र 2.17 (अ) : अफजल खान का शिवाजी द्वारा वध

तथा पुरन्दर का दुर्ग भी छीन लिया। 1656 ई. में शिवाजी ने कोंकण में कल्याण और जावली का दुर्ग भी अधिकृत कर लिया। 1656 में ही उन्होंने अपनी राजधानी 'रायगढ़' में बनायी। शिवाजी के साम्राज्य विस्तार की नीति से रूष्ट होकर बीजापुर के सुल्तान ने 1659 ई. में अफ़जल खाँ नामक अपने सेनापति को उनका दमन करने के लिए भेजा। संधिवार्ता के दौरान अफ़जल खाँ द्वारा धोखा देने पर शिवाजी ने बघनखे से उसका पेट फाड़ डाला। 1663 ई. में दक्कन के मुगल वायसराय शायस्ता खाँ को शिवाजी के दमनार्थ औरंगजेब ने नियुक्त किया, जिसने शिवाजी के केन्द्र स्थल पूना पर अधिकार कर लिया। लेकिन शीघ्र ही शिवाजी ने शायस्ता खाँ के शिविर पर रात्रि में आक्रमण किया, जिसमें उसे अपना एक पुत्र और अपने हाथ की तीन उँगलियाँ गवांकर भागना पड़ा। 1664 ई. में शिवाजी ने मुगलों के अधीन सूरत को लूटा। इन सभी गतिविधियों से क्रूद्ध होकर औरंगजेब ने अपने मंत्री आमेर के राजा मिर्जा जयसिंह और दिलेर खान को भेजा। मुगल सेना ने उनके अनेक किले अधिकृत कर लिए। विवश होकर शिवाजी ने जयसिंह के साथ 1665 ई. में संधि कर ली जो पुरंदर की संधि के नाम से विदित है। इस संधि के निम्न प्रावधान थे–

1. शिवाजी ने अपने कुल 35 दुर्गों में से 23 मुगलों को सौंप दिये और मात्र 12 अपने पास रखे, और
2. शिवाजी के बड़े पुत्र शम्भाजी को मुगल दरबार में पाँच हजारी मनसबदार बनाया गया।

राजा जयसिंह द्वारा शिवाजी को आगरा स्थित मुगल दरबार में उपस्थित होने के लिए भी आश्वस्त किया गया। जयसिंह ने उनसे कहा कि उन्हें दक्षिण के मुगल सूबों का सूबेदार बना दिया जायेगा। मई, 1666 ई. में शिवाजी शाही दरबार में उपस्थित हुए, जहाँ उनके साथ तृतीय श्रेणी के मनसबदारों जैसा व्यवहार किया गया और उन्हें नजरबंद भी कर दिया गया। लेकिन नवम्बर, 1666 ई. में वे अपने पुत्र शम्भाजी के साथ गुप्त रूप से कैद से निकल भागे और सुरक्षित अपने घर पहुँच गये। अगले वर्ष ही औरंगजेब ने शिवाजी को राजा की उपाधि और बरार की जागीर प्रदान की। दो वर्ष तक शिवाजी ने शांति बनाये रखी। लेकिन 1670 ई. में उन्होंने विद्रोह कर मुगलों की अधीनता में चले जाने वाले अपने सभी किलों पर कब्जा कर लिया। खानदेश के कुछ भू–भागों में स्थानीय मुगल पदाधिकारियों को सुरक्षा का वचन देकर उनसे चौथ (आय का चौथाई भाग) वसूलने का लिखित समझौता भी उन्होंने किया। 1670 ई. में उन्होंने सूरत को दुबारा लूटा। 1674 ई. में 'रायगढ़' के दुर्ग में शिवाजी ने महाराष्ट्र के स्वतंत्र शासक के रूप में अपना राज्याभिषेक कराया, इस अवसर पर उन्होंने 'छत्रपति' की उपाधि भी धारण की। 1680 ई. में शिवाजी की मृत्यु हो गयी। इस समय उनका मराठा राज्य बेलगाँव से लेकर तुंगभद्रा नदी के तट तक समस्त पश्चिमी कर्नाटक में विस्तृत था। इस प्रकार मुगल शक्ति, बीजापुर के सुल्तान, गोवा के पुर्तगालियों और जंजीरा स्थित अबीसीनिया के समुद्री डाकुओं के प्रबल प्रतिरोध के बावजूद शिवाजी ने दक्षिण भारत में एक स्वतंत्र हिंदवी स्वराज्य की स्थापना की।

वीर तानाजी राव मालुसरे –

तानाजी मालुसरे त्याग और वीरता की प्रतिमूर्ति थे। वे शिवजी के घनिष्ठ मित्र एवं निष्ठावान वीर मराठा सरदार थे। वे छत्रपति शिवाजी महाराज के प्रमुख किलेदार थे। 1670 ई. की सिंहगढ़ (कोंडाणा किला) की लड़ाई में अपनी महती भूमिका के लिए प्रसिद्ध हैं। अपने पुत्र के विवाह जैसे महत्वपूर्ण कार्य को छोड़कर शिवाजी महाराज की इच्छा का मान रखते हुए कोंडाणा किला जीतना अधिक आवश्यक समझा।

तानाजी राव का जन्म महाराष्ट्र के कोंकण प्रान्त में महाड़ के पास 'उमरथे' में हुआ था। वे बचपन से ही छत्रपति शिवाजी के दोस्त थे और उनके साथ हर युद्ध में शामिल होते थे। ओरंगजेब ने कपट से शिवाजी के साथ तानाजी को भी बन्दी बना लिया था। वहां से बाहर निकलने की योजना दोनों ने मिलकर ही बनाई थी। एक बार माता जीजाबाई कोंडाना किले को देख रही थी, शिवाजी द्वारा मन की बात पूछने पर जीजाबाई ने बताया कि इस किले पर लगा हरा झण्डा हमारे मन को उद्विग्न कर रहा था। शिवाजी ने अगले ही दिन अपने सैनिकों को बुलाकर पूछा

चित्र 2.17 (ब) वीर तानाजी राव मालुसरे

कि कोंडाना किला जीतने कौन जाएगा। अन्य सरदार व किलेदार यह कार्य करने का साहस नहीं जुटा पाए किन्तु तानाजी ने इस चुनौती को स्वीकार किया और बोले ''कोंडाना किला मैं जीतकर लाऊँगा।''

तानाजी अपने भाई सूर्या जी व शेलार मामा के साथ 342 सैनिक लेकर निकले। रात्रि में कठिन चढ़ाई पार कर किले पर चढ़ गए और कल्याण दरवाजा खोलने के बाद मुगलों पर आक्रमण कर दिया। कोंडाना किला उदयभान राठौड़ के नियंत्रण में था। उदयभान राठौड़ के नेतृत्व में 5000 मुगल सैनिकों के साथ तानाजी का भयंकर युद्ध हुआ। तानाजी बहादुर शेर की तरह लड़े, अन्ततः युद्ध जीत लिया गया लेकिन इस युद्ध में तानाजी गम्भीर रुप से घायल हो गए और वे वीरगति को प्राप्त हुए।

इस लड़ाई में किला तो स्वराज्य में शामिल हो गया लेकिन तानाजी मारे गए। छत्रपति शिवाजी ने जब यह खबर सुनी तो वे बोल पड़े– 'गढ़ तो जीता लेकिन सिंह नहीं रहा'' (गड आला पण सिंह गेला)

तानाजी मालुसरे की स्मृति में कोंडाना के किले का नाम बदलकर सिंहगढ़ कर दिया गया। पुणे में भी वाकड़ेवाड़ी भाग का नाम बदलकर ''नरबीर तानाजी बाड़ी'' कर दिया गया है। तानाजी के अनेकों स्मारक भी हैं।

चित्र 2.18 : रायगढ़ का किला (महाराष्ट्र)

(v) विजयनगर एवं बहमनी साम्राज्य :

विजय नगर साम्राज्य – संगम के पांच पुत्रों ने जिसमें हरिहर तथा बुक्का सर्वाधिक प्रसिद्ध थे, तुंगभद्रा नदी के उत्तरी तट पर विजयनगर राज्य की नींव डाली। वे वारंगल के काकतियों के सामंत थे और बाद में आधुनिक कर्नाटक में काम्पिली राज्य के मंत्री बने थे। मुहम्मद तुगलक ने काम्पिली को रौंदे जाने पर इन दोनों भाइयों को बन्दी बना लिया गया व बाद में मुक्त कर दिया गया। उनके गुरू विद्यारण्य के प्रयत्न से इनकी शुद्धि हुई और उन्होंने विजयनगर में अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित किया, जो शीघ्र ही दक्षिण भारत का शक्तिशाली राज्य बन गया। आज इसकी राजधानी विजयनगर की पहचान हम्पी नामक स्थल खंडहरों से की जाती है, जिसे विश्व विरासत संरक्षण के अन्तर्गत यूनेस्को द्वारा सम्मिलित कर लिया गया है।

हरिहर का राज्यारोहण 1336 ई. में हुआ। इसने होयसल के सारे प्रदेश को 1346 ई. में विजयनगर के अधिकार में ला दिया। बुक्का 1346 ई. में अपने भाई हरिहर का उत्तराधिकारी बना। उसने 1377 ई. तक राज्य किया। सारे दक्षिण भारत, रामेश्वरम्, तमिल व चेर प्रदेश तक बुक्का ने विजयनगर साम्राज्य को फैलाया। हरिहर द्वितीय (1377–1406 ई.) बुक्का का उत्तराधिकारी था। इस काल में उसका मुस्लिम शासको के साथ संघर्ष हुआ। यह शिव के 'विरूपाक्ष' रूप का उपासक था। इस काल में मैसूर, वनारा, त्रिचनापल्ली तथा कांजीवरम् सहित दक्षिण भारत तक विजयनगर साम्राज्य फैल गया। देवराय प्रथम (1406–1422 ई.) को हरिहर द्वितीय की तरह बहमनी सुल्तानों से पराजय मिली। 1422 ई. से 1426 ई. तक बुक्का के पुत्र देवराय द्वितीय ने शासन किया। इसे गजबेटकर (हाथियों का शिकारी) की उपाधि मिली। इसने बहमनी राज्य का मुकाबला करने हेतु पहली बार सेना में मुस्लिमों को भर्ती किया। इटली के यात्री निकालोकोन्टी एवं

चित्र 2.19 : विजयनगर साम्राज्य वर्तमान में हम्पी खण्डहर के रूप में

फारस के दूत अब्दुर्रज्जाक ने इसी काल में विजयनगर का भ्रमण किया। इस काल में विजयनगर साम्राज्य की सीमा सीलोन (श्रीलंका) के सामुद्रिक तटों तक पहुँच गयी थी। इस साम्राज्य के अन्तिम शासक क्रमशः मल्लिकार्जुन एवं विरूपाक्ष थे।

बहमनी साम्राज्य–

दक्षिण में बहमनी राज्य एवं राजवंश का आरम्भ मुहम्मद तुगलक के एक अधिकारी हसन (जफरशाह) ने 1347 ई. में किया। हसन ने दक्षिण के अमीरों की सहानुभूति प्राप्त करके, तुगलक के खिलाफ फैले विद्रोह का फायदा उठाकर अपना राज्य स्थापित किया। यह फारस के वीर योद्धा बहमन का वंशज था। इसने अल्लाउद्दीन बहमन शाह का खिताब धारण किया। कुलबर्गा में अपनी राजधानी बनाई। इसकी मृत्यु (1358 ई.) के समय बहमनी राज्य उत्तर में पेनगंगा से दक्षिण में कृष्णा नदी और पश्चिम में गोवा से पूर्व में भोंगिर तक फैल गया था।

विजयनगर की पश्चिमी सीमा बहमनी राज्य से टकराती थी। अतः दोनों साम्राज्यों में संघर्ष चलता रहा। मुकदल एवं रायचूर दो सीमान्त किलों पर अधिकार भी युद्ध का कारण रहा। बहमनी नवें सुल्तान अहमद ने कुलबर्गा से राजधानी हटाकर बीदर को बनाया। बहमनी राज्य में मुस्लिम अल्पसंख्यक थे अतः प्रोत्साहन वश कई विदेशी शिया मुस्लिम बहमनी जाकर बस गये। इस कारण दक्षिणी और अबीसीनियाई सुन्नी मुस्लिम नाराज हो गये। 13वें सुल्तान मुहम्मद तृतीय ने मुहम्मदगंवा जो राज्य का सेवक रहा था, को फांसी दे दी। गवां की मृत्यु के बाद बहमनी राज्य का पतन प्रारम्भ हो गया। आखिरी सुल्तान महमूद के राज्यकाल में बहमनी साम्राज्य के पांच स्वतंत्र राज्य बरार, बीदर, अहमदनगर, गोलकुण्डा और बीजापुर बन गये, जिनके सूबेदारों ने अपने को स्वतंत्र शासक घोषित कर दिया। बहमनी राज्य में साधारण प्रजा की दशा दयनीय थी, जैसा कि रूसी व्यापारी एथानासियस निकितिन ने लिखा है, जिसने बहमनी राज्य का चार वर्षों(1470–74 ई.) तक भ्रमण किया।

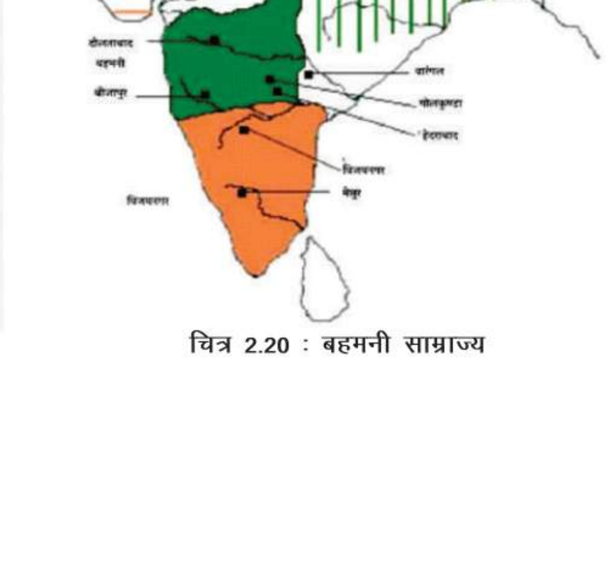

चित्र 2.20 : बहमनी साम्राज्य

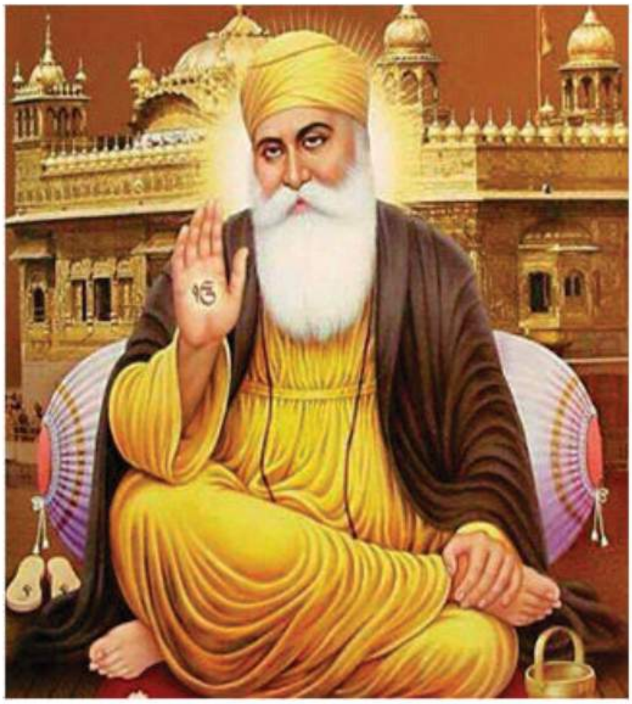

चित्र 2.21 : गुरू नानक देव

(vi) सिक्ख धर्म का प्रादुर्भाव एवं विकास –

(गोविन्द सिंह बन्दा बैरागी एवं रणजीत सिंह सहित)

ME2184

तेहरहवीं सदी के प्रारम्भ से ही पंजाब में मुस्लिम राज्य की स्थापना हो गई। मुस्लिम शासकों ने मजहबी–राज्य की स्थापना के अन्तर्गत मुस्लिमों को उच्च स्थान एवं हिन्दूओं को दूसरे दर्जे का स्थान दिया। दिल्ली सल्तनत की मजहबी कट्टरता की नीति से संघर्ष प्रारंभ हुआ। देवालयों के स्थान पर मस्जिदों का निर्माण आम बात थी। असहिष्णुता एवं घृणा का वातावरण बनता जा रहा था। ऐसे वातावरण में 15 अप्रैल 1469 ई. को गुरू नानक देव का जन्म हुआ। इनका विवाह सुलखनी के साथ हुआ। नानक की अध्यात्म के प्रति रूचि थी। नानक ने ''मानुष की जात सबै एक'' इसी तत्त्व का प्रचार करते हुए भारत भ्रमण किया। इनकी इस तरह की यात्राओं को उदासियाँ कहा जाता है। गुरू नानक देव की शिक्षाएँ – एक ईश्वर में विश्वास, नाम की महानता और उपासना, गुरू की महानता इत्यादि थी। मानव को शुभ कर्म करने पर बल दिया एवं जाति–पाँति, ऊँच–नीच का विरोध कर समाज सुधार का कार्य किया। उनका कहना था – ''करमा दे होगणे नवेड़े, जाति किसे पूछणी नहीं।'' जपुजी, पट्टी, आरती, रहिराम एवं बारह माह इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। सिक्ख धर्म का प्रवर्तन कर नानक ने विश्व के धर्म सुधारकों एवं समाज सुधारकों में अपना स्थान बना लिया। नानक देव की शिक्षाओं को स्पष्ट करने का कार्य गुरु अंगद ने किया जो नानक के शिष्य थे। उन्होंने इस हेतु गुरुमुखी लिपि का विकास किया, नानक देव की वाणी को गुरू–वाणी के रूप में लिपिबद्ध कराया, लंगर प्रथा का प्रचलन सत्संग के केन्द्र 'मन्झियां' की स्थापना, गुरु ग्रन्थ साहब संकलित करवाना आदि महत्त्वपूर्ण कार्य किये। 1552 ई. में गुरू अंगद की मृत्यु व्यास नदी के किनारे हुई। शिष्य अमरदास को नया गुरू बनाया गया। उन्होंने लंगर प्रथा, मंझी प्रथा को कठोरता से लागू किया, वैसाखी को त्योंहार बनाया एवं सती प्रथा का विरोध किया। बादशाह अकबर भी उनके दर्शन करने गोईंदवाल स्थान पर आया था। गोईंदवाल स्थान गुरू अमरदास के कारण तीर्थ स्थान माना जाता है।

गुरु रामदास (1574–81 ई.):– ने धार्मिक केन्द्रों की संख्या को बढ़ाया और 500 बीघा जमीन पर विशाल सरोवर बनाया जो 'अमृतसर' कहलाया। सिक्खों का विख्यात नगर अमृतसर इसी नाम से है। यहाँ के शक्तिशाली, समृद्ध किसान सिक्ख धर्म के अनुयायी बने। गुरू रामदास के कहने पर हरिद्वार यात्रा पर लगने वाला कर अकबर ने हटाया। अकबर से मित्रता रखकर रामदास ने सिक्खों की संख्या में वृद्धि की। गुरू रामदास ने गरीबों को दान देने की मसन्द प्रथा का प्रचलन किया। अब गुरू सतगुरू के साथ–साथ 'सच्चा पातशाह' भी कहलाने लगे।

गुरु अर्जुन देव (1581–1606 ई.)– सिक्खों के पांचवे गुरु थे। ये सिक्ख धर्म के सच्चे संगठनकर्त्ता सिद्ध हुए। धार्मिक अधिकारों के साथ राजनीतिक अधिकार से भी गुरू को सम्पन्न किया। जहांगीर के विद्रोही खुसरो को आशीर्वाद देने से जहांगीर ने इन्हें प्राणदण्ड दिया। आदिग्रन्थ का संकलन, मसन्द प्रथा को सुनिश्चित स्वरूप प्रदान करना, धन संग्रह हेतु विदेशों में अनुयायी भेजना ऐसे कार्य थे जिनसे सिक्ख धर्म आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर हुआ। अर्जुनदेव का प्राण बलिदान सिक्खों में सैन्य शक्ति के रूप में शक्तिशाली बनने का बदलाव ले आया। अर्जुनदेव का शहीद हो जाना सिक्ख धर्म के इतिहास की एक युगान्तकारी महान् घटना थी, जिससे शांतिप्रिय सिक्ख संघर्ष प्रेमी हो गये। सिक्ख अब एक सैनिक संघ बन गया। गुरू अर्जुन देव का पुत्र गुरू **हरगोविन्द सिंह (1606–1645 ई.)** सिक्ख गुरू बने। इन्होंने 'सैली' (ऊन की माला) की जगह दो तलवार धारण की। एक तलवार 'पीरी' धार्मिक गद्दी एवं दूसरी 'मीरी' राजनीतिक पदवी की प्रतीक थी। भेंट में धन के स्थान पर अस्त्र–शस्त्र लेना प्रारंभ किया। हर मन्दिर के पास एक भवन बनवाया जिसमें एक ऊँचा तख्त बनाया गया। इसका निर्माण 1699 ई. में हुआ। इसे 'अकाल तख्त' कहा गया। यह सिक्खों की राजनीतिक प्रभुता का प्रतीक बन कर उभरा। जहांगीर ने गुरू अर्जुनदेव का आर्थिक जुर्माना पुत्र गुरू हरगोविन्द से वसूल करना चाहा। इंकार करने पर गुरू हरगोविन्द को जेल में बन्दी बनाकर ग्वालियर के किले में रखा।

चित्र 2.22 : स्वर्ण मंदिर, अमृतसर

हालांकि हरगोविन्द ने सिक्ख पंथ को सैनिक रूप देने का कार्य आरम्भ कर दिया था परन्तु बाद के सिक्ख गुरू हरिराय (1645–1661 ई.) हरिकृष्ण 1661–1664 ई.), तेग बहादुर (1664–1675 ई.) सिक्ख पंथ का प्रचार करने का ही कार्य किया। तेगबहादुर द्वारा मजहब स्वीकार न करने पर औरंगजेब ने उनका सिर कटवा दिया। उनके लिए लिखा गया है कि– ''सिर दिया पर सार (सिरड़) नहीं दिया''। दिल्ली में उनका स्मारक चाँदनी चौक में 'सीसगंज गुरूद्वारा' नाम से प्रसिद्ध है।

गुरू गोविन्द सिंह (1675–1708ई.):–

ये गुरू तेगबहादुर के पुत्र थे। ये सिक्खों के दसवें और अन्तिम गुरू हुए। पंजाब पर औरंगजेब के अत्याचारों का विरोध करने हेतु उन्होंने शस्त्र एवं शास्त्र शिक्षा हेतु शिक्षण केन्द्रों का विकास किया। इससे सिक्ख संप्रदाय सक्षम बना। लाहौर के सूबेदार को 'नदौण के युद्ध' में पराजित किया। सिक्खों को सुसंगठित करने, उनकी कुरीतियाँ हटाने एवं नवचेतना जागृत करने के उद्देश्य से खालसा पंथ की स्थापना 1699 ई. में की। बलिदानी पांच भक्तों द्वारा पंज प्यारों, पाहुल (चरणामृत) एवं अमृत छकाणा (पताशे घुला पानी) की नई प्रथा प्रारंभ की। खालसा पंथ के सिक्खों को पांच 'ककार' अर्थात् कड़ा, केश, कच्छ, कृपाण और कंघा रखना आवश्यक था। औरंगजेब से युद्ध की आशंका के कारण उन्होंने 1699 ई. में ही आनन्दपुर साहिब में एक सैनिक केन्द्र खोल दिया। गुरू गोविन्द सिंह धार्मिक स्वतंत्रता एवं राष्ट्रीय उन्नति का ऊँचा आदर्श रखते हुए सिक्खों के उत्कर्ष में लगे रहे। 1705 ई. में मुगलों के आक्रमण के कारण उन्हें आनन्दपुर छोड़ना पड़ा। आनन्दपुर में छूटे दोनों पुत्रों जोरावर सिंह व फतहसिंह को कैद कर सरहिन्द के किले में दीवार में जिन्दा चुनवा दिया गया, परन्तु उन्होंने धर्म परिवर्तन नहीं किया। चमकोर के युद्ध में अपने अन्य दो पुत्रों अजीत सिंह व जुंझार सिंह शहीद हुए। खुदराना के संघर्ष में चालीस सिक्खों ने वीरगति प्राप्त की, उन्हें 'मुक्ता' एवं स्थान को मुक्तसर कहा गया। गुरू गोविन्दसिंह आनन्दपुर से अन्ततः तलवंडी पहुँचे जहाँ एक वर्ष तक उन्होंने साहित्यिक लेखन का कार्य किया। औरंगजेब के निमंत्रण पर वे मिलने जा रहे तभी उन्हें औरंगजेब की मृत्यु का समाचार मिला। 1 अक्टूबर 1708 ई. को गुरू गोविन्द सिंह भी परलोक सिधार गये।

चित्र 2.23 : गुरू गोविन्द सिंह

चित्र 2.24 : बन्दा बैरागी

बन्दा बैरागी (1708–1716 ई.):–

बन्दा बैरागी (बहादुर) का मूल नाम माधोदास था। इनका 1670 ई. में राजपूत परिवार में जन्म हुआ था और गोदावरी के तट पर आश्रम में निवास करते थे। गुरूगोविन्द सिंह के दक्षिण प्रवास के समय इन्होंने स्वयं को गुरू का 'बन्दा' कहा अतः बन्दा वैरागी के नाम से पहचाने गये। गुरू की आज्ञा से वे गुरू का शेष कार्य पूरा करने पंजाब में पहुँचे। इस समय सूबेदार वजीर खाँ के जुल्मों से पंजाब के लोग परेशान थे। ये सभी बन्दा के नेतृत्व में संगठित हो गये। बन्दा ने सर्वप्रथम 'सरहिन्द' पर धावा बोला। वजीर खाँ ने जिहाद का नारा देकर पंजाब के समस्त मुस्लिमों से बंदा का मुकाबला करने का आह्वान किया। माझा के मुझायल जाटों के सहयोग से छप्पर चिड़ी नामक स्थान पर वजीर खाँ के टुकड़े–टुकड़े कर दिये। 36 लाख वार्षिक राजस्व वाले प्रदेश पर बन्दा शासन करने लगा। किसानों को राहत देने के लिये बंदा ने जमींदारी प्रथा समाप्त कर दी। सरहिन्द की विजय से उत्साहित सिक्खों ने अमृतसर, बटाला, कलानौर और पठानकोट पर अधिकार कर लिया। पंजाब में मुगल प्रशासन समाप्त हो गया। मुगल सम्राट बहादुरशाह को पंजाब में सेना भेजनी पड़ी। बन्दा लोहगढ़ के पहाड़ी दुर्ग में चला गया। उसने मुगल सैनिकों पर छापामार नीति से आक्रमण प्रारंभ किये। बहादुरशाह की 28 फरवरी 1712 ई. को मृत्यु हो गई। नये मुगल बादशाह फर्रूखसियर ने सफदर खाँ के नेतृत्व में मुगल सेना बन्दा के खिलाफ भेजी। डेराबाबा में लम्बे समय तक घिरे रहने के बाद बन्दा ने आत्मसमर्पण किया। दिल्ली में वह अपने सैंकड़ों साथियों के साथ मौत के घाट उतार दिया गया।

बन्दा बैरागी महान् त्यागी, साहसी, शूरवीर और धर्म का रक्षक था। इन्होने मुगलों का निर्भयता से मुकाबला करके सिक्खों में नवचेतना का संचार किया था।

चित्र 2.25 : महाराजा रणजीत सिंह

रणजीत सिंह :–

रणजीत सिंह का जन्म 13 नवम्बर, 1780 ई. में गुजरांवाला में हुआ। इनके दादा चाकिया मिसल के वीर नेता थे। उन्होंने अहमदशाह अब्दाली के विरूद्ध कई युद्ध किए। इनके पिता महासिंह थे, जिनकी मृत्यु 1792 ई. में हुई। 1792 से 1797 ई. तक शासन परिषद्, जिसमें इनकी माता, इनकी सास तथा दीवान लखपत राय थे, ने प्रशासन कार्य चलाया। अठारहवीं शताब्दी के अन्त में सिक्ख मिसलें विघटित अवस्था में थीं। रणजीत सिंह ने इस स्थिति का लाभ उठाया व शीघ्र ही शक्ति के बल पर मध्य पंजाब में एक राज्य स्थापित कर लिया। रणजीत सिंह ने 1799 ई. में लाहौर पर तथा 1805 में अमृतसर की भंगी मिसल पर अधिकार कर लिया। 1803 में अकालगढ़ पर कब्जा कर लिया। 1804 ई. गुजरात के साहिब सिंह पर हमला कर पराजित किया। 1808 ई. में रणजीत सिंह ने सतलज नदी पार करके फरीदकोट, मलेरकोटला तथा अम्बाला को जीत लिया, परन्तु 1809 ई. में अमृतसर की संधि के बाद सतलज नदी के पार के प्रदेशों पर अंग्रेजों का अधिकार स्वीकार कर लिया गया। 1818 ई. में मुल्तान 1834 ई. में पेशावर पर कब्जा किया गया। 1839 ई. में रणजीत सिंह की मृत्यु हो गई।

महत्त्वपूर्ण बिन्दु

1. बलबन का राजत्व सिद्धान्त प्रसिद्ध रहा है। बलबन की मान्यता थी कि राजा पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि है।
2. बाबर ने अपनी की पुस्तक तुर्की भाषा में लिखी थी, जिसका नाम बाबरनामा या तुजूके बाबरी है। अब्दुर्रहीम खानखाना ने बाद में इसका फारसी में अनुवाद किया।
3. शेरशाह के सुधार एवं निर्माण प्रसिद्ध हैं। शेरशाह प्रशासन

में अकबर का अग्रगामी एवं पथ प्रदर्शक माना जाता है। भूमि माप एवं लगान को व्यवस्थित कर गल्लाबख्शी या बंटाई, नश्क, मुक्ताई या कनकूत और नकदी या जब्ती प्रणाली प्रचलित की। उसने 4 बड़ी सड़कें एवं अनेक सरायों का निर्माण करवाया। उसकी सबसे लम्बी सड़क बंगाल के सोनार गांव से लेकर पेशावर (वर्तमान पाकिस्तान) तक थी, जिसका अस्तित्व आज भी है। यह सड़क ग्रैड ट्रंक रोड के नाम से विख्यात है।

4. अकबर ने दार्शनिक एवं धर्मशास्त्रीय वाद–विवाद करने के लिए फतेहपुर सीकरी में 1575 ई. में इबादतखाना बनवाया। 1581 ई. में सभी धर्मों का सार संग्रह कर 'दीन–ए–इलाही' नामक धर्म का प्रवर्तन किया।
5. मुगल शासन प्रणाली भारतीय तथा विदेशी प्रणालियों का मिला–जुला रूप थी। यह भारतीय वातावरण में अरबी–फारसी प्रणाली थी।
6. 15वीं और 16वीं शताब्दी के धर्म–सुधार और भक्ति आन्दोलन ने इस सामाजिक एकता को और अधिक सुदृढ़ किया। दक्षिण में जन–साधारण आधारित इस धार्मिक आन्दोलन का नेतृत्व तुकाराम, रामदास, एकनाथ, वामन पंडित इत्यादि संतों और दार्शनिकों ने किया था। यह आंदोलन ऊँच–नीच, जाति व्यवस्था और कर्मकांड के विरुद्ध था, जिसने सभी के लिए 'भक्ति' द्वारा ईश्वर प्राप्ति का मार्ग दिखाया।
7. 1674 ई. में 'रायगढ़' के दुर्ग में शिवाजी ने स्वतंत्र शासक के रूप में अपना राज्याभिषेक कराया, इस अवसर पर उन्होंने 'छत्रपति' की उपाधि भी धारण की।
8. नानक ने ''मानुष की जात सबै एक '' तत्त्व का प्रचार करते हुए भारत भ्रमण किया। इनकी इस तरह की यात्राओं को उदासियाँ कहा जाता है। गुरू नानक देव की शिक्षाएँ – एक ईश्वर में विश्वास, नाम की महानता और उपासना, गुरू की महानता इत्यादि थी। उनकी शिक्षाओं में मानव को शुभ कर्म करने पर बल दिया गया।
9. तेगबहादुर द्वारा इस्लाम धर्म स्वीकार न करने पर औरंगजेब ने उनका सिर कटवा दिया। उनके लिखा था कि ''सिर दिया पर सार (सिरड़) नहीं दिया''। दिल्ली में उनका स्मारक चाँदनी चौक में 'सीसगंज गुरूद्वारा' नाम से प्रसिद्ध है।

अभ्यास प्रश्न

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न :–

1. गुलाम वंश का अन्य नाम क्या है ?
2. रजिया सुल्तान ने याकूत को किस पद पर नियुक्त किया था ?
3. 'लोह एवं रक्त' की नीति को लागू करने वाला शासक कौन था ?
4. बाबरनामा का फारसी में अनुवाद किसने किया था ?
5. 'ग्रैड ट्रंक रोड' किस शासक ने बनवाई थी ?
6. पानीपत की दूसरी लड़ाई कब हुई थी ?
7. हेमू ने कौनसी उपाधि धारण की थी ?
8. विश्व प्रसिद्ध हल्दीघाटी युद्ध कब हुआ था ?
9. अकबर ने कौनसे धर्म का प्रवर्तन किया था ?
10. बहमनी साम्राज्य का संस्थापक कौन था ?
11. 'अकालतख्त' का निर्माण सिक्खों के कौनसे गुरू ने करवाया था ?
12. शिवाजी का राज्याभिषेक कहाँ हुआ था ?
13. हम्मीर चौहान कहाँ का शासक था ?
14. 'अमर सिंह का फाटक' कहाँ पर है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. मुहम्मद तुगलक की पाँच योजनाओं के नाम लिखिए।
2. 'सिकन्दरी गज' के बारे में बताइये।
3. फरीद को शेर खाँ की उपाधि किसने एवं क्यों दी ?
4. विजय नगर साम्राज्य का परिचय दीजिए।
5. राव शेखा के बार में आप क्या जानते हैं ?
6. बन्दा बैरागी कौन था ?

निबंधात्मक प्रश्न –

1. दिल्ली सल्तनत के प्रशासन के बारे में बताइये।
2. सवाई जयसिंह क्षेत्र के योगदान को स्पष्ट करें।
3. 'हल्दीघाटी युद्ध' पर निबंध लिखिए।
4. मराठों के उदय में शिवाजी का योगदान बताइये।
5. गुरू नानक देव का परिचय देते हुए सिक्ख धर्म की प्रमुख शिक्षाओं का वर्णन कीजिए।